अन्नमाचार्य

हिन्दी व्याख्यात्री

डॉ. पुट्टपर्ति नागपद्मिनी

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

अन्नमाचार्य
गीत-माधुरी

तेलुगु मूल
श्रीमान् ताल्लपाक अन्नमाचार्य

हिन्दी व्याख्यात्री
डॉ. पुट्टपर्ति नागपद्मिनी
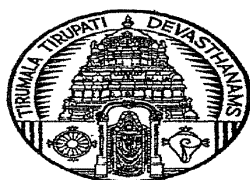
प्रकाशक
कार्यनिर्वहणाधिकारी
तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति
2008

ANNAMACHARYA GEETH MADHURI (HINDI)

Commentary By
Dr. Nagapadmini Puttaparthi

T.T.D. Religious Publications Series No. 772

First Edition : 2008

Copies : 1000

Cover Page Art by
K. Jagadish

Published by
K.V. Ramanachary, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati - 517 507.

Printed at
Tirumala Tirupati Devasthanams Press,
Tirupati - 517 507.

निवेदन

इस सुविशाल भारत देश में विविध संस्कृति-सभ्यता, भाषा-भाषी, आचार-व्यवहार से संबंधित लोग रहते हैं। विशेषता यह है कि इनमें विविधता होने पर भी, सभी एकसूत्र में बंधे रहते हैं। यह तो निश्चय ही हमारे पूर्वजों की देन है। हमारी आध्यात्मिक भावनाएँ ही इनके लिए मूलाधार हैं।

इसलिए हमारी गरिमामय प्राचीन सभ्यता व संस्कृति के बारे में जानकारी लेना हरेक नागरिक का कर्तव्य है। सुख व शांतिमय जीवन बिताने के लिए इन उपदेशों का आचरण करें। भगवान और भक्त के अटूट संबंध, समन्वय युक्त जीवन, इह व परलोक में मानव को श्रेष्ठ बनाता है।

हमारा सौभाग्य है कि मानव के बुद्धि व मन के विकास या आनंद के लिए संत महात्माओं ने निगूढ़ जीवन रहस्यों का सरल पद्धति में विवेचन किया। अपने अनुभवों को साहित्य, संगीत व ललितकलाओं के रूप में प्रस्तुत किया।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान ने आज इस भक्ति कार्यक्रम को अपने हाथ में लिया और इसके प्रचार व प्रसार में लगा हुआ है। एक ओर भगवान की पूजा-सेवाओं का आयोजन तथा दूसरी ओर योजनाबद्ध रूप में पुस्तकों का प्रकाशन कर, लोगों में सामाजिक चेतना लाने में कार्यरत है।

मुझे प्रसन्नता है कि तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी के अनन्य भक्त एवं तेलुगु के पदकवितापितामह श्रीमान् ताळ्ळपाक अन्नमाचार्य के ६०० वें जयन्त्युत्सव पर डॉ. पुट्टपर्ति नागपद्मिनी द्वारा हिन्दी में रचित 'अन्नमाचार्य गीत माधुरी' पुस्तक का प्रकाशन किया गया है। इसमें भक्तकवि अन्नमाचार्य की जीवनी तथा साहित्य सेवा पर संपूर्ण प्रकाश डाला गया है।

आशा करता हूँ कि हिन्दी भाषा-भाषी इस पुस्तक का समादर करेंगे।

भूमन करुणाकर रेड्डी

अध्यक्ष, ति.ति.दे. न्यास मंडली।
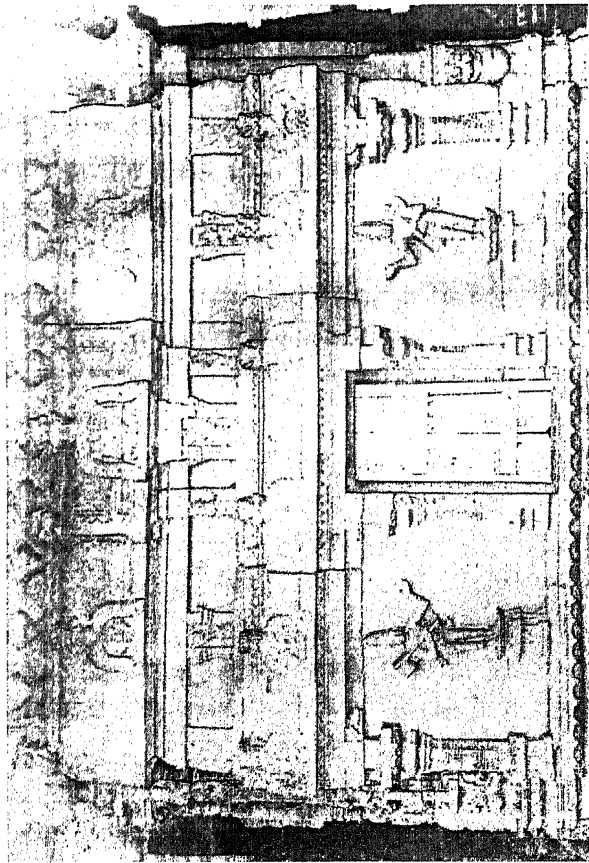
संकीर्तन भाण्डागार, तिरुमल मंदिर।

दो शब्द

श्रीमान् ताल्लपाक अन्नमाचार्य तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी के अनन्य भक्त हैं। अपने आराध्य देव का गुणगान करते हुए आपने तेलुगु में लगभग ३२,००० संकीर्तन रचे। तेलुगु के पदकवितापितामह के नाम से आप ख्याति प्राप्त हैं। आपके संकीर्तन इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि केवल साहित्यज्ञों के लिए ही नहीं, संगीतज्ञों के लिए भी उपयोगी सिद्ध हुए हैं। भक्ति संकीर्तनों की रचना करके आपने तेलुगु शब्दभंडार की भी श्रीवृद्धि की। ये सभी संकीर्तन ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण किये गये हैं।

ऐसे महान भक्तकवि के संकीर्तनों के प्रचार व प्रसार में अब तिरुमल तिरुपति देवस्थान लगा हुआ है। केवल तेलुगु भाषा में ही नहीं, अन्य भाषाओं में भी इनका प्रचार करने में प्रयत्नशील है। कर्नाटक संगीतज्ञों के साथ-साथ अन्य प्रकार के संगीतज्ञों से विनति है कि वे इन संकीर्तनों का गान करें, तो यह भगवान के प्रति आपकी सेवा ही होगी।

हैदराबाद के निवासी डॉ. पुट्टपर्ति नागपद्मिनी प्रख्यात साहित्यज्ञ श्रीमान् पुट्टपर्ति नारायणाचार्युलु की पुत्री हैं। आपने संकीर्तनों का लिप्यंतरण तथा उसका हिन्दी में भावार्थ प्रस्तुत किया है, ताकि तेलुगु भक्त कवि के हृदय-स्पंदन को हरेक हिन्दी भाषा-भाषी भली-भांति समझ सकें। 'सप्तगिरि' मास-पत्रिका में इन संकीर्तनों का धारावाहिक प्रकाशन किया गया है।

इस पुस्तक में कवि की जीवनी व रचनाओं का परिचय तथा १०८ चुने हुए संकीर्तन, भावार्थ सहित दिये गये हैं, जिनमें तिरुमल भगवान बालाजी एवं उनकी पट्टमहिषी श्री अलमेल्मंगा के गुणगान के साथ ही विविध पूजा-सेवाओं का सुमधुर विश्लेषण मिलता है।

मैं, तिरुमल तिरुपति देवस्थान की ओर से लेखिका को एवं इस कार्य में संलग्न कर्मचारियों को आशीर्वाद देता हूँ।

के.वि. रमणाचारी, आई.ए.एस.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी।
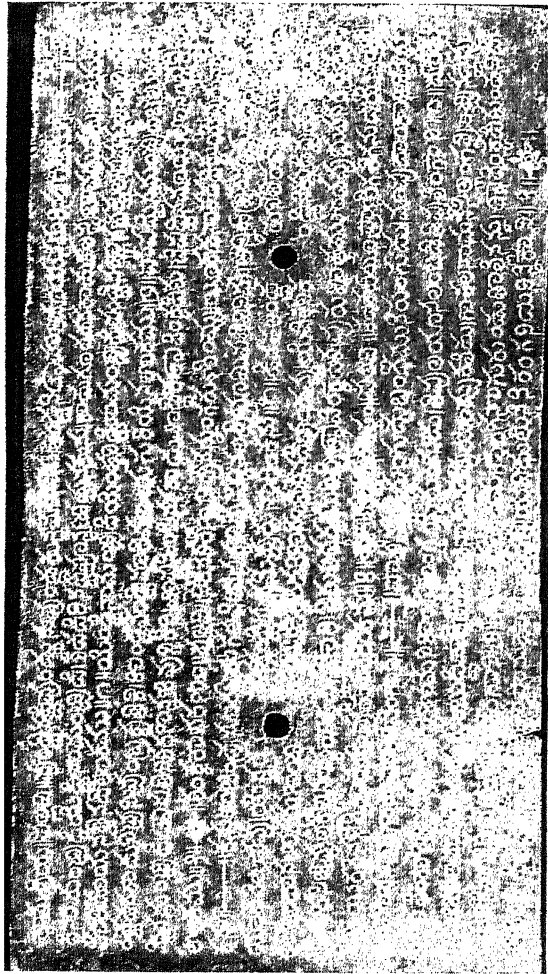
ताम्रपत्र पर संकीर्तन।

संकीर्तन - सरोवर

चंदमामा रावो जाबिल्लि रावो, मंचि
कुंदनंपु कोर वेन्न पालु तेवो।

(चंदमामाजी! नीचे आइये! मेरे इस दुलारे के लिए सुनहरी थाली में मक्खन और मलाई को लाइये।)

क्या आप जानते हैं – इस गीत को लिखा किसने? श्रीमान् ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने। पाँच सौ साल पहले लिखे गये इस गीत को अभी भी हर तेलुगु प्रांत की माँ अपनी संतान को सुलाते समय गाती ही रहती है। अन्नमाचार्य तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी के बहुत बडे भक्त थे। वे महान कवि भी थे। तेलुगु के सर्वप्रथम वाक्-गेयकार भी अन्नमाचार्य ही हैं। गीतों को स्वयं लिखकर गानेवालों को 'वाग्गेयकार' कहा जाता है। अन्नमाचार्य के सुप्रभात गीतों को सुनने के बाद ही तिरुमल के बालाजी - वेंकटेश्वर शयन शय्या से उठते थे तथा उनकी लोरियां सुनकर ही सोने जाते थे। मात्र वेंकटेश्वर ही नहीं, अपितु अलमेल्मंगा को भी अन्नमय्य के गीतों से प्रेम है। अन्नमाचार्य के गीत उतने मधुर तथा भक्ति-भाव से भरे हैं।

करीब छः शताब्दियों के पहले, कडपा जिले के 'ताल्लपाक' गाँव में 'नारायणय्य' नामक बालक रहा करता था। उस गाँव में दो मंदिर थे। एक तो श्री चेन्नकेशव स्वामी का, तो दूसरा सिद्धेश्वर स्वामी का। 'चेन्नकेशव स्वामी' की स्थापना जनमेजय महाराज ने की थी। हर दिन कई देवी-देवताएँ तथा सिद्ध-पुरुष इस स्वामी

की पूजा किया करते थे। उस मंदिर के आश्रय में जीवन-यापन करनेवाले कुछ ब्राह्मण परिवारों में से 'नारायणय्य' का परिवार भी एक था।

नारायणय्य को बचपन से पढ़ाई में रुचि नहीं थी। लाखों प्रयत्न करने पर भी कुछ प्रगति नहीं होने के कारण उसके पिताजी ने अपने पुत्र को 'ऊटुकूरु' गाँव में, अपने बंधुजनों के घर, पढ़ाई के लिए रख दिया। किंतु वहाँ पर भी नारायणय्य पर सरस्वती माई की करुणा का प्रसार नहीं हुआ। गाँव के छोटे-बडे, सभी लोग, नारायणय्य की अवहेलना करने लगे। नारायणय्य ने अपने इस अनपढ़ जीवन का अंत कर लेने का निर्णय ले लिया। गाँव के बाहर जो 'चिंतलम्मा' देवी का मंदिर था, वहाँ अकेले जाकर, वहाँ के सर्पबिल में हाथ रखा। लेकिन हुआ क्या? उसके सामने चिंतलम्मा देवी प्रकट हो गयीं। उस बालक को गोद में लेकर, आँसू पोंछती हुई देवी ने कहा –'क्यों आत्म-हत्या पर तुले हो? तुम्हारी तीसरी पीढ़ी में एक महान हरि-भक्त जन्म लेने जा रहा है। उससे तुम्हारे पूरे वंश को कैवल्य मिलेगा। ताळ्ळपाक चेन्नकेशव स्वामी आज से स्वयं तुम्हारी देख-भाल करेंगे। तुम तो महान् विद्वान होनेवाले हो। वापस घर चलो।' चिंतलम्मा देवी की इस सांत्वना से नारायणय्य बहुत खुश हो गया तथा अपनी चिंता को वहीं छोडकर वापस घर पहुँचा। तदनंतर श्री चेन्नकेशव स्वामी की कृपा से महान पंडित भी हो गया। उसका पुत्र ही नारायण सूरि था।

नारायण सूरि भी सुप्रसिद्ध कवि तथा पंडित था। उसकी पत्नी लक्कमांबा, सुमधुर गायिका तथा भगवद्-भक्ति रखनेवाली

थी। गाँव के लोग कहा करते थे कि अपने मायके के (माड्डपूरु) श्री चेन्नकेशव स्वामी मंदिर में, वहाँ के देवता से लक्कमांबा स्वयं वार्तालाप किया करती थी। इस दंपति को संतान का भाग्य प्राप्त न था। कितने ही देवी-देवताओं की सेवा करने पर भी कुछ लाभ नहीं हुआ, तो आखिर दोनों ने तिरुमल वेंकटेश्वर स्वामी से मन्नत माँग ली कि हमें पुत्रोदय का वरदान दो।' एक शुभ मुहूर्त की वेला में तिरुमल की यात्रा के लिए पति-पत्नी निकल पडे।

दोनों ने तिरुमल पहुँचकर स्वामी के मंदिर में प्रवेश किये। ध्वजस्तंभ के सामने यों ही साष्टांग-प्रणाम करने के लिए झुक गये, उसी क्षण, दोनों के सर चकराने लगे। उस चेतनारहित स्थिति में उन्हें लगा कि हाथों में एक तेजोमय खड्ग रखा गया सा है। आँखें खुल गयीं। उन दोनों के आनंद की सीमा नहीं रही। स्वामी के दिव्य-दर्शन कर लेने के बाद, अपनी मनोकामना की पूर्ति के विश्वास के साथ, दोनों गाँव लौट गये।

जन्म

लक्कमांबा गर्भवती हो गयी। उन्होंने वैशाख मास की एक शुभ घडी में पुत्र को जन्म दिया। (सन् १४०८ में) श्री हरि का खड्ग 'नंदक' के अंश में जन्मे उस बालक को 'अन्नमय्य' का नामकरण किया गया। बाल्य काल से ही वह बालक तिरुमल वेंकटेश्वर स्वामी के नामोच्चारण को सुनने के बाद ही दूध पीता था। उस स्वामी के नाम को लेते हुए लोरियाँ गाने पर ही सोता था। लक्कमांबा के भक्ति गीतों को तथा पिताजी के काव्य-पाठ को सुनते हुए सर ऐसा हिलाता था, मानों उसे सब कुछ समझ में आ गया है।

बाल्यावस्था

अन्नमय्य पाँच साल का हो गया। पाठशाला में गुरुजी के पास बैठकर एक बार पाठ सुन लेता, तो उसे सब कुछ कंठस्थ हो जाता था। उसकी ग्रहण-शक्ति पर सभी अध्यापक आश्चर्यचकित हो जाते थे।

अन्नमय्य अपने मित्रों के साथ हमेशा खेल-कूद में लगा रहता था। गाँव के तालाब के पास, पेडों पर उनके साथ बैठकर ग्राम-गीतों को गाते रहना, कमल के फूलों को देखते हुए अपने आपको खो जाना, चाँदिनी की रातों में लडकियों के बृंदगानों तथा नृत्य को देखते हुए, उन्हीं के साथ गाना-नाचना, खेतों-खलिहानों में काम करते हुए मजदूरों के साथ हाथ-बाँटना – ये सब उसे बहुत भाते थे। इसीलिए अन्नमय्य ताल्लपाक के ग्रामवासियों का लाडला हो गया। घर का काम कौन करेगा?

नारायण सूरि का तो संयुक्त परिवार था। काम-काज तो बहुत कुछ रहता ही था। संयुक्त परिवार का सूत्र सदैव यही रहता है – सदस्यों के बीच जिस तरह जल्दी मन-मुटाव आते हैं, वैसे ही जल्दी वे मिट भी जाते हैं। इसी सूत्र के अनुसार, एक दिन अन्नमय्य पर सब लोग चिढ़ जाने लगे। 'तू तो हमेशा गाँव में अपने साथियों के साथ यूँ ही फिरता ही रहेगा, तो घर का काम-काज कौन सँभालेगा?' अन्नमय्य की समझ में कुछ नहीं आयी! 'आज से गाना-वाना बंद। गाय-बैलों के लिए जंगल से घास-फूस लाना आज से तुम्हारा काम है। समझें?' अन्नमय्य को अब कुछ-कुछ बातें समझ में आने लगीं। माता-पिता तो वहीं खडे

थे। इस डाँट-डपट पर वे कुछ कह न सके। अन्नमय्य दराँती को लेकर निकल पडा।

उसे तो जंगल में जाना तथा घास-फूस काटना तो आता ही नहीं। जैसे ही दराँती को चलाया, उसकी उँगली कट गयी। खून बहने लगा। बाधा होने लगी। आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी। अभी इस दुरवस्था पर उसे लगा कि इसका कारण कौन है? एक तरफ बंधु-जनों की क्रोध-भरी बातें, दूसरी ओर मौन-मुद्रा में माता-पिता! उसके मन में वैराग्य-सा छा गया। जीवन के फीकेपन का अनुभव हुआ। कहाँ के माता-पिता? कैसे रिश्तेदार? सब झूठ! असत्य! मात्र परमात्मा के, सब कुछ झूठ!' इतने में तिरुमल की यात्रा पर जा रहे यात्रियों का वृंद उसे दिखायी दिया। दराँती को वहीं पर फेंककर, उनके साथ चला।

तिरुमल में

तिरुपति में गंगम्मा देवी के दर्शन के बाद, अलिपिरि में नृसिंह स्वामी, हनुमानजी को प्रणाम कर 'तिरुमल गिरि' चढ़ने लगा। वहां के पेडों, फूलों, झरनों तथा प्रकृति के रमणीय दृश्यों का आनंद उठाता हुआ, अष्टवर्षीय बालक, अन्नमय्य, अत्यंत उत्साह से पहाड चढ़ रहा था। दुपहर तक वह इतना थक गया कि वहाँ के वृक्षों के बीच बेहोश गिर पडा। पता नहीं, कब तक ऐसा पडा रहा। किसी ने उसकी तरफ देखा हो या न हो, किंतु जगन्माता अलमेल्मंगा ने तो उसे देख ही लिया। उस नादान बालक की भक्ति को देखकर उस करुणामयी को अपने मातृत्व का स्मरण आया। एक सुहागिन का रूप धारण कर, उसके पास वे आ

पहुँचीं। बेहोश पडे अन्नमय्य को गोद में लेकर अपने स्पर्श से उसे होश में लायीं। अन्नमय्य की आँखें तो खुल गयीं। उसे लगा – 'यह स्पर्श तो मेरी माँ का ही है।' लेकिन आँखों के सामने कोई नहीं है। उसकी समझ में कुछ नहीं आया। दुःख भरे स्वर में चिल्लाने लगा –'माँ! मुझे तो कुछ भी दिखायी नहीं दे रहा है।' अलमेल्मंगा ने उसे तसल्ली देते हुए कहा –'देखो पुत्र! परम पवित्र सालग्राम शिलाओं से विराजमान इस पर्वत पर जूतों का धारण कर चढ़ना मना है। जूतों को उतारकर देखो।' उसी क्षण जूते उतारकर अन्नमय्य ने चारों तरफ नजर दौड़ायी, तो देखा हर एक पेड, एक मुनिवर-सा खडा है। वहाँ के जीव-जंतुओं में देवी-देवताओं के रूप दिखायी दे रहे हैं। वेदों की प्रतिध्वनियों से पूरा पर्वत गूँज रहा है। अन्नमय्य ने हर्ष पुलकित होकर उस पर्वत को प्रणाम किया। माँ अलमेल्मंगा ने उसे प्रसाद खिलाया। उसी क्षण अन्नमय्य ने माँ की स्तुति में एक पद्य-मालिका को पढ़ा। जैसे, उसी क्षण माँ सरस्वती की करुणा का प्रसार उस पर हुआ हो! इस तरह अन्नमय्य में कविता-शक्ति प्रवेश कर गयी। उस सप्त-गिरीश के दिव्य दर्शन की इच्छा-शक्ति, अलमेल्मंगा के प्रसाद से मिली वात्सल्य-शक्ति तथा सरस्वती कटाक्ष से मिली कविता-शक्ति – इन तीनों के साथ, अन्नमय्य तिगुणी स्फूर्ति के साथ 'तिरुमल' पर पहुँच गया।

सकल तीर्थों का संगम स्थल, पुष्करिणी में नहाकर, श्री वराह स्वामी के दर्शन के बाद, आनंद-निलय दिव्य-धाम में अन्नमय्य ने प्रवेश किया। वहाँ के ध्वजस्तंभ को साष्टांग प्रणाम कर, विमान वेंकटेश, योग-नरसिंह स्वामी, जनार्दन मूर्ति आदि

की वंदना कर, यागशाला, कल्याण मंडप, वाहन मंडप आदि को भी देखते हुए श्री वेंकटेश के वैभव को मन ही मन सराहने लगा। अंततः मूल विराट के सामने, अर्चा मूर्ति के समक्ष आ खडा हो गया। उस दिव्य मंगल मूर्ति की सुंदरता को देखने के लिए दो आँखें तो बहुत कम लगने लगीं। शरीर भर आँखें ही हो, तो भी देख पाना, असंभव सा लगा। शंख, चक्र, सूर्यकटारि, पीतांबर, वरद-हस्त, मणि-कुंडल, रत्न-मुकुट, वनमाला, श्रीवत्स, कौस्तुभ आदि अमूल्य आभूषणों से तेजोमय वेंकटेश की दिव्य मंगल मूर्ति को देखते-देखते, उसका मन आनंद तरंगित हो गया, जो कवितावेश के रूप में प्रकट हुआ। 'हे पुष्करिणी स्वामी! हे करुणानिधान! हे आर्त रक्षक स्वामी ! हे श्रीनिवास! आपके दर्शन से हम शतकोटि पापों से मुक्त हो गये।' छोटा तथा नादान बालक अन्नमय्य की इस परवशता को देखकर अर्चक स्वामी भी आश्चर्यचकित हो गये तथा स्वामी के तीर्थ-प्रसाद देकर आशीर्वाद दिये। उस दिन से 'तिरुमल' ही अन्नमय्य का निवास-स्थान हो गया। एक द्वादशी के दिन, तिरुमल गिरियों में स्थित सभी दिव्यतीर्थों के दर्शन करने अन्नमय्य निकल पडा। कुमारधारा (जहाँ पर तारकासुर संहार के पाप को मिटाने के लिए कुमार स्वामी ने तपस्या की।); 'अमरतीर्थ' (जहाँ पर हर दिन कोटि कोटि देवी-देवता, स्नान कर पवित्र होते हैं।); आकाश गंगा (बारह सालों की तपस्या के बाद जहाँ पर अंजना देवी ने 'हनुमान' को जन्म दिया था।); पाप-विनाश (जहाँ स्नान करने पर सभी पाप मिट जाते हैं); इस तरह प्रत्येक तीर्थ में स्नान-अनुष्ठान करते समय, अपने भीगे कपडों के सूखने तक, एक-एक कविता-शतक

को तत्काल वह पढ़ता गया। इस तरह सारे तीर्थों में स्नान कर लेने के बाद, स्वामी के दर्शन के लिए मंदिर पहुँचा, तो मंदिर का फाटक बंद था। अन्नमय्य निराश हो गया। स्वामी के दर्शन के न होने से मन में असीम वेदना भर गयी। उसी आवेग में उसके मुँह से एक गीत निकल पडा। उसी क्षण फाटक अपने आप खुल गया। अन्नमय्य के प्रति स्वामी की अपार करुणा को देखकर, सारे अर्चक स्वामी, घबरा गये। उसे अंदर ले जाकर, अर्चा-मूर्ति के सामने खडा कर दिये। तत्क्षण, अन्नमय्य ने फिर से अपने आराध्य देवता को संबोधित कर एक पद्य-शतक को पढ़ा। तुरंत स्वामी के गले का मुक्ताहार नीचे गिर पडा, मानों उसके शतक को सुनकर स्वामी खुशी से पुलकित हो, उसे भेंट दे रहे हों। अर्चक स्वामियों को अब मालुम पडा कि यह एक साधारण बालक नहीं है, इस पुष्करिणी स्वामी के वरदान का फल ही है।

इस तरह 'तिरुमल-वास' अन्नमय्य के लिए एक दिव्यानुभव-सा सिद्ध होने लगा। 'घनविष्णु' नामक एक वैष्णव-योगी भी श्री वेंकटेश की सेवा में रत हो, उसी मंदिर के सामने रहा करता था। विष्णु-तत्त्व का प्रचार ही उस योगी का नित्य-कर्म था। एक दिन उसे सपने में दर्शन-देकर स्वामी ने कहा कि 'अन्नमय्य' नामक बालक जो सदैव एक एकतारा हाथ में लेकर फिरते हुए, मेरी स्तुति में गीत गाता हुआ दिखायी देता है, उसे तुम मुद्रा-धारण करा दो।' स्वामी की आज्ञा पाकर 'घनविष्णु' ने बालक को ढूँढ़ते निकल पडा तथा उसे पहचानकर, वेदोक्त रीति में वैष्णव धर्म का उपदेश दे दिया। उस दिन से अन्नमय्य 'अन्नमाचार्य' कहलाने लगे।

शोकतप्त माता-पिता

उधर पुत्र के बिछुड जाने पर अन्नमय्य की माता 'लक्कमांबा' तथा पिता नारायण सूरि, दोनों चिंताग्रस्त हो गये। जंगल से पुत्र घर लौटा ही नहीं। उसके लिए ढूँढ़-ढूँढ़कर दोनों थक गये। लेकिन उसका पता ही न मिला। लक्कमांबा तो सदैव भगवान के चरणों पर पडी, रोती रहती थी। पिता तो पागल की तरह हमेशा खोया सा रहता था।

वह द्वादशी का दिन था। गाँव के सभी लोग अन्नमय्य के लिए श्री चेन्नकेशव के मंदिर में पूजा कर रहे थे। लक्कमांबा, भगवन्नाम का जप करते-करते, बेहोश गिर पडी। उस दशा में उसके मुँह से 'तिरुमलेश' का नामोच्चारण सुनकर नारायण-सूरि को 'तिरुमल' का स्मरण हो आया। झट तिरुमल के लिए दोनों निकल पडे। तिरुमल में घनविष्णु के पास बैठकर वेंकटेश की स्तुति में गा रहे अपने पुत्र को दोनों ने पहचान लिया तथा उससे लिपट गये। माँ लक्कमांबा तो उसे छोड न पायी। नारायण सूरि भी, खोये हुए पुत्र को भगवान की सन्निधि में फिर से पाकर आनंद-विभोर हो गया। घनविष्णु यतीन्द्र के मठ में विश्राम लेते समय, माँ लक्कमांबा ने अश्रुभरे नयनों से पुत्र को अपने साथ 'ताल्लपाक' वापस चलने का प्रस्ताव रखा। अन्नमय्य तिरुमल छोडकर जाना नहीं चाहता था। एक तरफ माँ का वात्सल्य, दूसरी तरफ भगवान की सन्निधि से बिछुड जाने का दुःख। इस दुविधा में आँखें मूँदकर अन्नमय्य लेटा हुआ था कि आँखों के सामने एक महान कांति का साक्षात्कार हुआ। उसमें से एक वाणी सुनायी दी – 'देखो बालक! माता को कष्ट न पहुँचाओ। ताल्लपाक चले जाओ।

परतत्व के अन्वेषण में लगे रहो। तुम्हारा कल्याण होगा।' इसे भगवान का ही आदेश मानकर, माता-पिता के साथ अन्नमाचार्य ने ताल्लपाक पहुँचकर कुछ समय के बाद नियति के नियमानुसार 'तिम्मक्का' तथा 'अक्कमांबा' नामक दो कन्याओं से विवाह कर लिया। गृहस्थाश्रम धर्म का पालन करने लगा। लेकिन मात्र एक क्षण के लिए भी भगवान के ध्यान को छोडा ही नहीं।

कुछ दिनों बाद, अपने जन्म-दिन के अवसर पर अन्नमाचार्य, अपने स्वामी के दर्शन के लिए तिरुमल आ पहुँचा। दर्शन के बाद, श्री वराह स्वामी के मंदिर में विश्राम कर रहा था, लेकिन उसका मन तो कल्लोलित था। विवाह के पहले निरंतर भगवान वेंकटेश का ध्यान ही उसका जीवन था। हर दिन एक दिव्यानुभव! हर क्षण, एक भव्य तथा भद्र स्पर्श। हर दर्शन में एक नूतन नव्य लोक का आलोक। इस गृहस्थाश्रम में उसका मन नहीं लग रहा था। बीते हुए दिनों के स्मरण में वह खो गया। शांति की खोज में, 'एकतारा' पर राग को छेडा। तत्क्षण मन में कुछ चलन-सा पैदा हुआ। नारद का वीणागान, तुंबुरु का गीत ...... भगवान के दिव्य चरण ..... ब्रह्मदेव से नित प्रक्षालित होनेवाले चरण .... त्रिविक्रमावतार में भूम्याकाशों को छू लिया – इन चरणों ने। बलि-चक्रवर्ती को पाताल तक कुचल दिया - इन चरणों ने। संसार के दुःख को मिटाकर, शाश्वत आनंद को प्रदान करनेवाले इन चरणों का स्थिर निवास है – यह तिरुमल क्षेत्र! इन भावनाओं से अन्नमाचार्य का मन आनंद से झूम उठा। उसी क्षण में एक गीत का भी आविर्भाव हो गया। **(ब्रह्मा कडिगिन पादमु)** उन उद्वेग भरे क्षणों में उसे श्री वेंकटेश का साक्षात्कार हो गया। अश्रु भरे नयनों

से वह अपने स्वामी के दिव्य-चरणों पर गिर गया। भगवान की करुणा भरी वाणी भी सुनायी दी –'पुत्र! तुम धन्य हो! मेरे तत्त्व को गीतों द्वारा सुनते हुए मुझे अमितानंद हो रहा है। इन गीतों को प्रतिदिन सुने बिना, मेरा दिन गुजरना असंभव-सा लग रहा है। अन्य कोई भी रचना, इतना आनंद नहीं दे पायेगा। यह मेरा अनुभव है। इसीलिए हे भक्त शिरोमणि! इसी तरह के गीतों की रचना हर दिन करते रहो। मैं उस गीत को स्वयं सुनता रहूँगा। आज से यह मेरी प्रतिज्ञा है। यही तुम्हारा व्रत है।' भगवान की वाणी सुनकर अन्नमाचार्य आश्चर्यचकित, अवाक् रह गया। क्या भगवान इतना चाह रहे हैं, इन गीतों को। क्या अपनी इन रचनाओं में साक्षात् श्रीमन्नारायण के मन को आकर्षित करने की शक्ति है? नहीं, भगवान ही परम कृपालु हैं। नारद तुंबुरादि मुनि वंद्यों के सामने अपना स्थान ही क्या है ? अपने इस पिपीलिका-समान भक्त के मन को बहलाने के लिए ही भगवान इस तरह कह रहे हैं। लेकिन, उनकी आज्ञा को नकारें कैसे? क्या करें? स्वामी तो अदृश्य हो गये। मगर उनकी वाणी तो अब भी अन्नमाचार्य के कानों में गूँज रही थी।

स्वामी की आज्ञा तो शिरोधार्य है ही। हर दिन भगवान श्री वेंकटेश की स्तुति में एक संकीर्तन गाते हुए, गाँव-गाँव घूमने लगा। भक्ति का प्रचार-प्रसार करता रहा। जहाँ भी जाता था, उसके भक्ति-गीतों के भावात्मक तथा भाषात्मक सौंदर्य से आकर्षित हो, भक्ति-भाव में बाह्य ज्ञान को भी खोकर लोग नाचा करते थे।

इस यात्रा में उसे मालुम पडा कि अहोबल मठाधीश, 'आदिवन शठगोप यति स्वामी' वेद-वेदांगों में अत्यंत प्रतिभावान

हैं तथा अध्यात्म-विद्या में संपन्न हैं। अन्नमाचार्य ने यह भी सुना कि अहोबल क्षेत्र के स्वामी 'नृसिंह' ने स्वयं शठगोप स्वामी को सन्यासाश्रम दिलाया है। उनके बारे में सुनते ही, अन्नमाचार्य का मन उस यतीन्द्र के दर्शन के लिए तरसने लगा। नंदलूरु, ओंटिमिट्टा, कडपा ग्रामों से होते हुए, वहाँ के चोक्कनाथ स्वामी, रघुनाथ स्वामी, वेंकटेश्वर आदि मंदिरों का दर्शन कर उन-उन देवताओं की स्तुति में गीत गाते हुए, आखिर अन्नमाचार्य अहोबल पहुंच गया तथा 'आदिवन शठगोपयति' के चरणों का आश्रय पाया। लगातार बारह वर्ष उनकी सेवा में ही लगा रहा तथा वैष्णव आगमों का पठन-पाठन भी किया। इन सभी वर्षों की शिक्षा से उसे अवगत हुआ कि भगवान अत्यंत करुणामय हैं। सभी जीव धर्म तथा जाति से परे, उनकी सन्निधि में समान हैं। 'शरणागति' का अर्थ है, तन-मन से अपने आपको, भगवान के चरणों में समर्पित करना। इस चर्या से भगवान स्वयं अपने भक्तों के वश में हो जायेंगे। इसी भाव को व्यक्त करते हुए, अन्नमाचार्य ने हजारों गीतों की रचना की।

राजाश्रय में

पेनुगोंडा राज्य का राजा 'सालुव नरसिंह रायलु' अन्नमाचार्य को अपना गुरु मानता था। कहा जाता है कि अन्नमाचार्य के आशीर्वाद के बल से ही वह राजा हो पाया था। इसी कारण उसने अन्नमाचार्य से प्रार्थना की कि कृपया आप अपने परिवार के साथ, यहाँ पेनुगोंडा में रहिए। अन्नमाचार्य ने सोचा कि राजाश्रय भी वैष्णव धर्म के प्रचार में काम आयेगा। मंदिरों को केन्द्रस्थान बनाकर, भक्ति-गीतों के द्वारा, विशिष्टाद्वैत को व्याप्त किया जा

सकता है। इसी विचार से अन्नमाचार्य ने उसकी प्रार्थना मान ली, लेकिन एक वादा लेकर 'जब तक अपने संकीर्तन-यज्ञ में कोई आपत्ति न हो, तब तक यहीं रहूँगा। अगर कुछ इस तरह का विघ्न जिसी भी क्षण में हो जाय, तो तत्क्षण यहाँ से चला जाऊँगा।' नरसिंह रायलु ने उनकी बात मान ली। इस प्रकार अन्नमाचार्य का पेनुगोंडा-वास, कुछ वर्षों तक चलता रहा।

एक दिन राजा ने भरी सभा में आह्वानित किया। सभी अमात्य, सामंत राजा तथा अंतःपुर की स्त्रियाँ, सभा में उपस्थित थे। उस दिन राजा का मन बहुत ही उल्लसित था। उसे लगा कि इस वेला में एक श्रृंगार-परक गीत क्यों न सुन लें। उसी क्षण, उसने अन्नमाचार्य से अनुरोध किया कि वेंकटपति की स्तुति में एक श्रृंगार रस युक्त गीत को कृपया सुनाइये। वैसे तो हर दिन अन्नमाचार्य की दिनचर्या भी यही थी। अपने पुत्र-समान राजा के अनुरोध को दृष्टि में रखते हुए - अपने भावना-लोक में वे महान-संकीर्तनकार प्रवेश कर गये। मनोनेत्र के सामने – श्री वेंकटगिरीश की सतीमणि अलमेल्मंगा का साक्षात्कार हो गया। उनकी अलौकिक सुंदरता का वर्णन अनोखे ढ़ंग में अन्नमाचार्य करने लगे –'हे सखि! अलमेल्मंगा के अधरों पर जो कस्तूरी लगी हुई है, वह तो कहीं, श्री वेंकटेश को लिखा हुआ पत्र तो नहीं है न? तनिक ध्यान तो दो। चकोर जैसी काली आँखोंवाली अलमेल्मंगा की कनखियों में जो लालिमा छायी हुई है, वह क्या हो सकती है? अपने प्राणेश्वर श्री वेंकटेश पर नजरों के बाण जो उन्होंने साधे थे, उन्हें बाहर खींचते समय उन बाणों को लगा हुआ खून तो नहीं है न?' (**'एमोको चिगुरुटधरमुन'**) इस गीत को सुनते-सुनते, सभी

सभासद, आनंद की जलधि में सराबोर हो गये। हर दिन इस तरह के गीतों को सुनने का भाग्य पाये हुए राजा की भी प्रशंसा करने लगे। अन्नमाचार्य को तो एकदम आकाश पर ही बिठा दिये। इस कोलाहल को देखते हुए पता नहीं, राजा के मन में एक इच्छा ऐसी जाग गयी कि अन्नमाचार्य भले ही मेरे गुरु हैं, लेकिन मेरे आश्रय में सुख-शांति से जीवनयापन कर रहे हैं तथा गीत तो भगवान की स्तुति में ही सदा गा रहे हैं। क्यों न एक गीत, हमारे श्रृंगार जीवन के बारे में भी हो जाय?' अन्नमाचार्य का राजोचित सत्कार करने के बाद उनके सामने राजा ने यह प्रस्ताव रखा। इन बातों को सुनकर अन्नमाचार्य चौंक पडे। अपने कानों को बंद कर लिये। उनका शरीर थर-थर काँपने लगा। आँखों से अंगार गिरने लगे। उन्होंने कहा –'रे मूर्ख! दिन-रात भगवान के ही ध्यान में रहते हुए, उनकी ही स्तुति में जीवन बिताते रहे मुझ भक्त से ऐसा अनुरोध करते हुए तुम्हें शरम नहीं आती है क्या? यह मेरी कविता-शक्ति, भगवान को ही अर्पित है। आदि-अंत रहित उस भगवान के आश्रय के सामने, तुच्छ राजाश्रय का मूल्य ही क्या है? कदापि मैं यह काम नहीं कर सकता। लो, मेरे प्रस्थान का समय आ गया है। एक पल के लिए भी यहाँ ठहरना - पाप का प्रश्रय पाना ही होगा।' उसी क्षण राजा के दरबार से वे निकल भी पडे। भरी सभा में अपने इस अपमान पर, सालुव नरसिंह रायलु को अपरिमित क्रोध आ गया। सैनिकों को बुलाकर अन्नमाचार्य को पकड लाने की आज्ञा दी। कारागार में बंदी बनाकर, हाथों तथा पैरों को लोह की कडी से बाँधकर रखने को कहा (जिसे 'मूरु रायर गंडा' कहते हैं) राजा की आज्ञा, तत्क्षण अमल में लायी गयी।

अपनी इस दीनावस्था पर अन्नमाचार्य को बडी बाधा पहुँची। उन्हें लगा कि राजा का आश्रय जितना मीठा होता है, उनका क्रोध भी उतना ही कडुवा होता है । किंतु भगवान का आश्रय सदा सर्वदा सुखमय ही होता है। उनका मन फिर से तिरुमल जाने के लिए तरसने लगा। उनको संदेह भी हुआ कि इतने वर्षों से तिरुमलेश की स्तुति में ही हर पल बिताने का फल क्या यही है ? अपने प्रिय भक्त की इस दुरवस्था को देख नहीं रहे हैं क्या स्वामी? उन तक अपना करुणाभरा स्वर पहुँच पा रहा है कि नहीं? अगर इसका समाधान 'नहीं' ही है, तो फिर इस तरह भगवान के चरणों में ही जीवन को अर्पित करने की आवश्यकता ही क्या है? अगर इस प्रश्न का समाधान सकारात्मक है, तो फिर देरी क्यों? इस आक्रोश को प्रकट करने का मार्ग भी गीत ही था। 'हे करुणा सिंधु! अपने इस भक्त के दीनालाप को सुन रहे हो कि नहीं? अगर सुन रहे हो तो अब तक उस क्षीरांबुधि में विश्राम किस तरह ले पा रहे हो ? चीर-हरण के समय, द्रौपदी-साध्वी ने जिस तरह दीन होकर प्रार्थना की थी, उसी तरह हम भी आपसे बिनती कर रहे हैं। आपकी राह देख रहे हैं। मकर की जकड में आये गजराज की तरह हम भी आज आपके वरद-हस्त की प्रतीक्षा कर रहे हैं। आप तो वैकुंठ में अपनी पत्नी लक्ष्मी के साथ श्रृंगार-क्रीडा में निमग्न हैं। अब हमारी रक्षा कौन करेंगे?' इस गीत की परिसमाप्ति के बाद, बंधन अपने आप खुल गये। अन्नमाचार्य बंध-विमुक्त हो गये। इस दृश्य को देखकर नरसिंह रायलु को होश आ गया तथा उसने क्षमा-याचना की। दयालु भगवान के दयालु भक्त ने भी अपने शिष्य के अपराध को माफ कर दी, किंतु फिर से वहीं रहना, उनको अच्छा नहीं लगा। 'तिरुमल' के लिए वे रवाना हो

गये। फिर से स्वामी के दिव्य दर्शन में अपने आपको खो देने के दिन आ गये। उनकी सन्निधि में ही बैठकर, उनकी प्रस्तुति में संकीर्तन रचने का अवसर प्राप्त हुआ। इस तरह फिर तिरुमलवास का सौभाग्य प्राप्त होना – उन्हें बहुत अच्छा लगा। इस संकीर्तन-यज्ञ की महिमा से वाक्-शुद्धि उन्हें मिली, जिससे अनेकानेक अद्भुत घटनाएँ हुईं।

कहा जाता है कि इसी वाक्-शुद्धि की महिमा से, एक बार एक धनहीन ब्राह्मण को एक राजा के द्वारा संपदा मिली। कच्चे आम, एकदम मधुर हो गये।

एक बार कारणवश अन्नमाचार्य तिरुमल से कहीं बाहर गये थे। फिर वे 'तिरुमल' लौट आ रहे थे – अपनी पूजा-मूर्ति के साथ। रास्ते में एक रात, एक हनुमान के मंदिर में वे विश्राम के लिए रुके थे कि उस रात कुछ मुसलमान सैनिकों ने आकर उस गाँव में लूट-मार की। हनुमान के मंदिर में भी वे घुस आये तथा वहाँ ठहरे यात्रियों के पास जो धन-राशि थी, सब कुछ लूट लिये। अन्नमाचार्य के पास जो अर्चा-मूर्ति थी, उसे भी उन्होंने ले ली। अपने स्वामी की रक्षा न कर पाने की अपनी विवशता पर वे दुःखित हो गये। वह आक्रोश भी एक गीत के रूप में प्रकट हुआ, जिसमें हनुमान, गरुड तथा कार्तवीर्यार्जुन से उन्होंने प्रार्थना की कि खोयी हुई मूर्ति को किसी भी तरह उन्हें वापस ला दें। भावोद्वेग में गाकर अन्नमाचार्य उनींदी में खो गये कि उन मुसलमान सैनिकों के सामने एक बृहदाकार वानर प्रत्यक्ष हो गया तथा उनके शिबिर का ध्वंस करके, अन्नमाचार्य की पूजा-मूर्तियों को फिर से ला उनके सामने रख दिया। जब उन्होंने आँखें खोलीं, तो मूर्तियाँ उनके सामने थीं।

इस तरह की अद्भुत घटनाओं के बीच, अन्नमाचार्य का संकीर्तन-यज्ञ तो निरंतर चलता ही रहा, जिसके कारण तेलुगु साहित्य का भंडार, दिन-ब-दिन भरता ही गया। करीब बत्तीस हजार संकीर्तन (श्रृंगार तथा वैराग्य), श्रृंगार मंजरी (काव्य), वेंकटाचल माहात्म्य (काव्य), द्वादश शतक, द्विपद रामायण आदि की रचना अन्नमाचार्य ने की।

अन्नमाचार्य का निधन ई.१५०३ में हुआ। कहा जाता है कि उनका शरीर मंदिर में अदृश्य हो गया, जिसमें से एक कांति निकलकर, श्री वेंकटेश की अर्चामूर्ति में विलीन हो गयी।

साहित्यक योगदान

अन्नमाचार्य अपने गीतों द्वारा वैष्णव-धर्म के सूत्रों को जनता तक पहुँचाने में सफल रहे। प्रजा की भाषा में, उसी लय में, गीतों की रचना होने के कारण तथा भक्ति-भाव से भरपूर होने के कारण उन्हें शाश्वतत्व भी मिला। मधुर भक्ति से रस-प्लावित उन गीतों में राम कृष्णादि अवतारों तथा विविध क्षेत्रों के देवी-देवताओं की स्तुति भी होने के कारण, सभी प्रांतों के तेलुगु-भाषी, अन्नमाचार्य को अपने ही प्रांत के समझकर, गाने लगे। अन्नमाचार्य के पुत्र तथा प्रपौत्र भी कवि-पंडित थे। अन्नमाचार्य की रचनाओं को ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण कराके, उन्हें आगे की पीढ़ियों तक पहुँचाने में भले ही वे सफल रहे, किंतु तदनंतर काल में लोगों की लज्जाहीन धनाकांक्षा तथा अकर्मण्यता के कारण इस अमूल्य संपदा का तो कुछ हद तक नष्ट हो गया। यह तो हमारा भाग्य कहा जा सकता है कि मात्र बारह हजार संकीर्तन, श्रृंगार मंजरी (काव्य), वेंकटाचल माहात्म्य (काव्य), वेंकटेश्वर शतक ही आज उपलब्ध हैं। मात्र

एक शताब्दी से ही इस अपूर्व-संपदा के बारे में बाहर की दुनिया को मालुम पडा है। फिर भी आज तेलुगु भाषा की सुंदरता, सुगमता, अभिव्यक्ति में वैचित्र्य तथा भाव-शबलता का एक मात्र दर्पण, श्री अन्नमाचार्य का ही साहित्य माना जाता है। संगीत-जगत में श्री अन्नमाचार्य का ही राज चल रहा है।

सामाजिक चेतना

तत्कालीन समाज की कुरीतियों का खंडन, अन्नमाचार्य अपने गीतों द्वारा करते रहे। उनकी धारणा थी कि ईश्वर एक है। सबों की अंतरात्मा एक ही है। उच्च तथा नीच जाति का अंतर यहाँ नहीं है। राजा की निद्रा तथा सेवक की निद्रा में कोई अंतर होता है क्या? ब्राह्मण जिस धरती पर जीवन-यापन करता है, उसी धरती पर चंडाल भी जीवन बिताता है। मैथुन सुख तो पशु कीटकों से देवी देवताओं तक – एक ही जैसा होता है। दिन-रात भी धनवान एवं निर्धन के लिए समान ही है। इसी तरह श्री वेंकटेश का शुभनाम सभी जीव-जंतुओं की रक्षा एक समान करता है। **(तंदनाना आही)**।

पन्द्रहवीं सदी में ही उच्च नीच रहित समाज का आशय - अन्नमाचार्य जैसे हरिभक्त के गीतों में ध्वनित होना - उनकी सुधारवादी दृष्टि का उदाहरण है। छद्म भक्तों के वेष में समाज को धोखा देनेवाले ढ़ोंगी साधुओं से सतर्क रहने का संदेश भी उनके गीतों में मिलता है। सदाचारों का पालन करनेवाला - वह किसी भी जाति का हो, अगर वह हरि को जानता हो, तो वह आदरणीय ही है। आत्मा को जो सदा-सर्वदा निर्मल रखता है, धर्म की तत्परता जिसका लक्षण है, जगत से हितकर सर्वदा होते

वैरभाव को जो त्याग देता है, वही श्री वेंकटेश का निजी-सेवक हो जाता है। **(ये कुलजुडैननेमि)**

साधारणतया ब्राह्मणों में, अपने संध्यानुष्ठान को लेकर, अहंता होती है। लेकिन, अन्नमाचार्य की दृष्टि में संध्या-गायत्री का अर्थ कुछ इस प्रकार है –'निर्मल वैष्णव भक्तों का सहवास, सदा-सर्वदा श्री हरि के नाम-गुण का संकीर्तन, परम भागवतों की चरण-सेवा, लक्ष्मीनाथ की महिमाओं का चारों-पहर श्रवण करना एवं सदैव तिरुमंत्र के मनन में मग्न रहते हुए, श्री वेंकटेश की आराधना करना ही सच्चे अर्थ में संध्योपासना है। **(सहज वैष्णवाचार वर्तनुल)**।

इस प्रकार अपने गीतों में संदर्भानुसार सामाजिक अंशों की भी प्रस्तावना, अन्नमाचार्य करते हुए दिखायी देते हैं। अन्यों के दास बनकर सुखी जीवन बिताना, उनके विचार में सुख ही नहीं है। सूकर जैसे स्वार्थ जीवन से क्या फल मिलेगा? तो फिर सुख का अर्थ क्या है? अन्नमाचार्य कहते हैं कि चंचलता को छोड, स्थिरता से पारिवारिक जीवन बिताना, हरि का दास हो जाना, अन्यों की निंदा न करना – यही सच्चा सुख है।

इतना कुछ करने पर भी उन विबुध जनों पर क्रोध प्रकट करनेवालों को देखकर 'याज्ञवल्क्योपनिषद्' में कहा गया है – 'अपकारिणी कोपश्चेत् - कोपे कोपः कथं न ते?' – अपकार करनेवालों पर भी क्रोध नहीं करना चाहिए। क्रोध पर ही क्रोध करना अच्छा है। चाणक्य भी यही कहते हैं – 'कोपो, वैवश्वतो राजा'। क्रोध यमराज है। इसका तात्पर्य है, क्रोध ही अपराधों

का मूल है। अन्नमाचार्य भी यही कहते हैं कि क्रोध से ही जो अपना पेट भर लेते हैं, भगवद्प्राप्ति की उन्हें बहुत कम संभावना है। सच्चे कर्मचारी के लक्षण क्या हैं? अन्नमाचार्य कहते हैं कि धन के विषय में नीति का पालन करनेवाला, कार्यालय के विषयों को गोपनीय रखनेवाला, अपने अधिकारी की आशाओं का पालन करनेवाला, अकृत्य या विद्रोह न करनेवाला ही सच्चा कर्मचारी है।

अन्नमाचार्य के गीतों में सगुण भक्ति की छाप, सभी लोगों को जँच जाना भी उनकी कीर्ति का कारण है। श्री वेंकटेश की रूप-माधुरी का वर्णन बडी ही तन्मयता से वे करते हैं। कभी उनके चरणारविंदों को देखकर आनंदविभोर हो जाते हैं, (**ब्रह्मा कडिगिन पादमु, ई पादमे कदा**) तो कभी उनके सुकोमल कर-पल्लव की अरुणिमा को देख, उसकी करुणा के स्मरण में खो जाते हैं। (**इंदरिकि अभयंबु लिच्चु चेयि**)

श्री वेंकटेश के आयुधों, आभूषणों की स्तुति करना तो अन्नमाचार्य को अत्यंत प्रीतिदायक है। विशेषतया उनके सुदर्शन चक्र की स्तुति तो बारंबार वे करते रहते हैं। 'दानव विनाशक' के रूप में चक्रत्ताल्वार की स्तुति करना उनको अधिक भाता है। श्री वेंकटेश को भगवान विष्णु के रूप में ही देखने के कारण उनके वाहन, शेष, गरुडादियों की स्तुति भी अन्नमाचार्य के गीतों में विस्तार रूप से देखी जा सकती है। राजा-महाराजाओं द्वारा दिये गये विविध अमूल्य आभूषणों से अलंकृत हो, श्री भू-देवियों सहित, नित्योत्सव, पक्षोत्सव, मासोत्सव तथा ब्रह्मोत्सवों में

अगणित भक्तों की विविध सेवाओं को मंदस्मित मुद्रा में स्वीकारते हुए, उनकी मनोकामनाओं की पूर्ति करनेवाले कलियुग के स्वामी श्री वेंकटेश की कितनी भी स्तुति करें, तोभी अन्नमाचार्य कभी भी थके ही नहीं। दशावतारों में उनका वर्णन, विशेषतया नृसिंहावतार, श्रीराम, बालकृष्णादि अवतारों में उनका मुनिजन मनोमोहक रूप, वात्सल्यादि अनंत गुण, भक्त हितकारी लीला, मोक्षाभिलाषी के लिए वैकुंठ-धाम की चर्चा – ये सभी अंश अन्नमाचार्य के गीतों में पाये जाते हैं। श्री वेंकटेश की नित्यानपायिनी देवी-लक्ष्मीजी के शीतल वात्सल्य का वह प्रप्रथम अनुभव, अन्नमय्य को सदा सर्वदा याद ही रहता है। श्री तिरुमलेश से उनकी गाढ़ अनुरक्ति का मूलकारण – वही मातृ-देवी है, जिन्होंने शालिग्राम शिलाओं से विलसित, इस परम पवित्र तिरुमल गिरि पर चढ़ने का उपाय उन्हें बताया था।

कवितार्किक केसरी की उपाधि से सुविख्यात वेदांतदेशिक अपनी रचना 'श्रीस्तुति' में कहते हैं –

यस्यां यस्यां दिशि विहरते देवि दृष्टिस्त्वदीया।
तस्यां तस्यामहमहमिकां तन्वते संपदोघाः।

जहाँ-जहाँ माँ लक्ष्मी की दृष्टि दौडती है – उन-उन प्रदेशों में, विविध वैभव, प्रतियोगिता में भाग लेनेवालों की तरह, अहमहमिका भाव से प्रत्यक्ष हो जाते हैं। इसका कारण है – अपने आश्रितों पर माँ की अपार कृपा। जो भक्त अपने आश्रय में आता है, उसे अपनी वत्सलता में डुबो देती है माँ! उसे अपने पति नारायण के चरण कमलों की आराधना में अग्रसर बना देती हैं वे! वैष्णव सिद्धांत को 'श्री वेष्णव सिद्धांत' के नाम से अभिहित करने

का कारण, सदा सर्वदा महाविष्णु के साथ अनपायिनी की तरह रहते हुए, भक्तों की कामना पूर्ति में उनका सहयोग ही है। इसी कारण उस दिव्य-दंपति का स्मरण जब-जब अन्नमाचार्य करते हैं, उसी क्षण भाव-विभोर हो, उनकी कृपा की चिर-धारा का वर्णन करने में मग्न हो जाते हैं।

उस दिव्य-दंपति की श्रृंगारोपासना का वर्णन- अन्नमय्य की विशेषता है। अष्टविध नायिकाओं की तरह लक्ष्मी देवी भी, कभी विरहोत्कंठिता के रूप में, कभी प्रोषित पतिका के रूप में, कभी वासवसज्जिका के रूप में, तो कभी खंडिता के रूप में भी उन्हें दर्शन देती है। एक पुरुष होते हुए, स्त्री सहज मनोभावों को अक्षर-रूप देना कितना कठिन है? किंतु इस कला में अन्नमय्य की लेखिनी अत्यंत, सहज, तथा कुशल सिद्ध हुई है। (**येमोको चिगुरुटधरमुन; तानेंदुवोये; तोल्लिटिवले गावु तुम्मेदा; नेनंदुवोये** आदि)

भक्ति की प्रगाढ़ता का भी अच्छा परिचय अन्नमाचार्य के गीतों में मिलता है। वे कहते हैं – जब सर्वश्रेष्ठ स्वामी सामने ही खडे हैं, तो फिर अन्यों के आश्रय में क्यों जायें? अन्य देवताओं की कृपा के लिए इधर-उधर भटकने से अच्छा है, तुम्हारा सेवक बन जाना । हे वेंकटेश! जब सरोवर सामने है, तो कूप क्यों खोदें?' भगवान की मेधा की गणना में, उनके भक्तों की बुद्धि कुशलता का गुणगान करते हुए वे कहते हैं – हे स्वामी! हम दास ही चतुर हैं तुमसे! मात्र तुलसी के पत्तों को तुम्हारे चरणों पर डालकर, फलस्वरूप सर्वश्रेष्ठ मोक्ष को पा रहे हैं देखो।'

अन्य वैष्णव क्षेत्र जैसे अहोबल, उदयगिरि, कडपा, श्रीरंगम्, बदरी, मथुरा, बृंदावन, अयोध्या, पंचवटी आदि क्षेत्रों के प्रस्ताव से अवगत हो रहा है कि अन्नमाचार्य ने उन-उन क्षेत्रों की यात्रा भी की। ध्यान देने की बात यह है कि उन-उन क्षेत्रों की देवताओं से तिरुमल वेंकटेश की अभिन्नता को स्थापित करने में तिरुमल क्षेत्र से उनकी प्रगाढ़ अनुरक्ति स्पष्ट हो रही है।

तिरुमल शिखरों पर सदियों से विराजमान स्वामी की वैभव-गाथाओं को पुनरुक्ति के बिना अनेकानेक रीतियों में गीतों द्वारा शाश्वत रूप देना - अन्नमय्य का अनोखापन है। तेलुगु भाषा की मधुरता, व्यक्तीकरण में विविधता, शैली की विलक्षणता, विषयों की बहुरूपता – इन सभी विशेषताओं के कारण - लगता है कि हम गीतों के नंदनवन में प्रवेश कर गये हैं। तेलुगु के सुविख्यात कवि, साहित्यकार, गीतकार, व्याख्याता एवं अनुवादक, 'सरस्वती पुत्र' की उपाधि से अलंकृत पुट्टपर्ति नारायणाचार्युलुजी कहते थे कि अन्नमय्य का साहित्य तो सर्वसुंदर शर्कर का टुकडा है। जहाँ भी स्पर्श करें, अति मधुर लगता है।' इससे बढ़कर क्या कहें? भाषाविदों तथा संगीत-विद्वानों को अभी भी लग रहा है कि उनके साहित्य में अव्यक्त तथा अलौकिक कोण बहुत सारे हैं। संपूर्ण रीति से उनके साहित्य का संशोधन करना अभी भी बाकी है। इन सभी परिणामों को देखते हुए लगता है कि शायद अन्नमाचार्य तथा स्वयं वेंकटेश्वर स्वामी को फिर से मानवाकार में आ बैठकर, उस साहित्य का विवेचन कर, उसकी विशिष्टता के बारे में बताना पडेगा!

कृतज्ञता ज्ञापन

अन्नमाचार्य तेलुगु भाषा के प्रप्रथम गीतकार हैं। उनके संकीर्तनों को इस ग्रंथ के द्वारा हिन्दी भाषियों के सम्मुख रखने की जो प्रेरणा उस अंतर्यामी परमात्मा, भगवान बालाजी के द्वारा मुझे मिली है, उसे मैं अपने पूर्वजन्मों का पुण्यफल मानती हूँ। इसे धारावाहिक के रूप में 'सप्तगिरि' मास पत्रिका में प्रकाशित करने का श्रेय प्रधान संपादक श्री सि. शैलकुमारजी एवं उपसंपादक श्रीमान् धारा सुब्रह्मण्यम् जी का है तथा मैं उन्हें अपना आभार प्रकट करती हूँ।

तदनंतर, इस रचना को ति.ति. देवस्थान के प्रकाशन के रूप में प्रकट करने की अनुमति जो मिली है, एतदर्थ देवस्थान की न्यास-मंडली के अध्यक्ष श्री भूमन करुणाकर रेड्डी जी एवं कार्यनिर्वहणाधिकारी श्रीमान् के.वी. रमणाचारी, आई.ए.एस. – इन दोनों मनीषियों को मेरा शताधिक प्रणाम। त्रुटि रहित इस प्रकाशन में समभागी ति.ति.दे. मुद्रणालय के सभी अधिकारियों को अभिवादन करती हूँ। सुधी पाठकों की सुविधा के लिए अकारादि अनुक्रमणिका आखिरी पृष्ठों में दी गई है। अपने इस सुयोग के दाता करुणालु, उस श्रियःपति के चरणारविंदों को मेरा बारंबार प्रणाम।

– डॉ. पुट्टपर्ति नागपद्मिनी

अन्नमाचार्य

गीत-माधुरी

१

विन्नपालु विनवले विंत विंतलु
पन्नगपु दोमतेर पैकेत्तवेलय्या ।।विन्नपालु ।।

तेल्लवारू जामेक्के - देवतलु मुनुलु
अल्लनल्ल नंतनिंत - नदिगोवारे
चल्लनि तम्मि रेकुलु सारसपु गन्नुलु
मेल्लमेल्लनेविच्चि मेलुकोन वेलय्या ।। विन्नपालु ।।

गरुड किन्नर यक्ष कामिनुलु गमुलै
विरहपु गीतमुल विंतलपाला
परिपरि विधमुल पाडेरु सन्निधिलो
सिरिमोगमु देरचि चित्तगिंच वेलय्या ।। विन्नपालु ।।

पोंकपुशेषादुलु तुंबुरु नारदादुलु
पंकजभवादुलु नी पादालु चेरि
अंकेलनुन्नारु लेचि अलमेल्मंगनु
वेंकटेशुडा रेप्पलु विच्चि चूचि लेवय्या ।। विन्नपालु ।।

समस्त लोकाधिपति श्री वेंकटेश से मसहरी को तनिक हटाकर भक्तों की विनतियों को सुनने की प्रार्थना की गयी है।

हे स्वामी! सुप्रभात वेला हो गयी है। देवी-देवताएँ तुम्हारी सन्निधि में पहुंच चुके हैं। अपने कमल जैसे नेत्रों को खोलकर जाग उठिए। गरुड,

किन्नर, यक्ष, कामिनियाँ तुम्हारे विरह में मंदिर के सामने खडे होकर गीतालाप कर रहे हैं। लक्ष्मी के पार्श्व से तनिक हटकर उनकी व्यथा सुनिए। आदिशेष, तुंबुरु, नारद, ब्रह्मादि भक्तश्रेष्ठ, तुम्हारे चरणों के पास ही खडे होकर, तुम्हारी करुणा भरी दृष्टि की प्रतीक्षा कर रहे हैं। अलमेल्मंगा के साथ शयन-सुख में थके हे स्वामी! पलकें खोलिए।

* * *

२

नित्यात्मुडैयुंडि नित्युडै वेलुगोंदु
सत्यात्मुडैयुंडि सत्यमै तानुंडु
प्रत्यक्षमैयुंडि ब्रह्ममैयुंडु सं
स्तुत्युडे तिरुवेंकटाद्रि विभुडु ।।नित्यात्मुडै ।।

ये मूर्ति लोकंबुलेल्ल नेलेडु नात
डेमूर्ति मोक्षमिय्यजालेडु नात
डेमूर्ति लोकैक हितुडु
ये मूर्ति निजमूर्ति येमूर्तियुनु गाडु
येमूर्ति त्रिमूर्तुलेकमैन यात
डेमूर्ति सर्वात्मुडेमूर्ति परमात्मु
डामूर्ति तिरुवेंकटाद्रि विभुडु ।। नित्यात्मुडै ।।

ये देवु देहमुन निन्नियुनु जन्मिंचे
ने देवु देहमुनु निन्नियुनु नणगे मरि
ये देवु विग्रहंबी सकलमिंतयुनु
ये देवु नेत्रंबु लिनचंद्रुलु
ये देवुडी जीवुलन्निंटिलोनुंडु
नेदेवु चैतन्यमिन्निटिकि नाधार
मेदेवुडव्यक्तु डेदेवु डद्वंद्वु
डा देवुडे वेंकटाद्रि विभुडु ।। नित्यात्मुडै ।।

ये वेल्पु पादयुगमी भूमियु नाकाशंबु
ये वेल्पु पादाक्रांतंबनंतंबु
ये वेल्पु निश्वासमी महामारुतमु
ये वेल्पु निजदासुली पुण्युलु
ये वेल्पु सर्वेशु डेवेल्पु परमेशु
डे वेल्पु भुवनैक हित मनोभावुकुडु
ये वेल्पु कडु सूक्ष्ममे वेल्पुकडु धनमु
आवेल्पु तिरुवेंकटाद्रि विभुडु **।। नित्यात्मुडै ।।**

कठोपनिषत् में कथित नित्यत्व, तैत्तरीयोपनिषत् में चर्चित सत्यत्व को 'ईश्वरत्व' के साथ जोडते हुए कहा गया है कि वह ईश्वर, स्वयं श्री वेंकटेश्वर ही हैं।

परमात्मा के सर्वनायकत्व, मोक्षप्रदत्व, व्यक्ताव्यक्तत्व, साकार-निराकारत्व, त्रिमूर्तिमत्व, सर्वात्मकत्व तथा परमात्म तत्त्व इन सभी तत्त्वों का, श्री वेंकटेश में ही दर्शन करते हैं।

परमात्मा के नेत्रों में सूर्यचंद्र (मुंडकोपनिषत्) हैं। चेतनता के रूप में सकल जीव-राशि के लिए वे आधार-भूत हैं। (कठोपनिषत्) 'भगवद्गीता' के अनुसार, स्वामी अव्यक्त तथा अद्वन्द्व भी हैं।

परमात्मा के चरण-भूमि है तथा केश हैं – आकाश। इस तरह वे आदि-अंत रहित भी हैं। पवन, उनका उच्छ्वास-निश्वास हैं। पुण्य कर्मों का आचरण करनेवाले सभी उनके दास हैं। सर्वेश, परमेश, भुवनैक हित की कांक्षा करनेवाले - श्री वेंकटेश 'अणोरणीयान - महतोमहीयान' ही हैं।

* * *

३

नाटिकि नाडे ना चदुवु
माटलाडुचुनु मरचे चदुवु **।। नाटिकि ।।**

एनय नीतनि एरुगुटके पो,
वेनुकवारु, चदिविन चदुवु
मनसुन नीतनि मरचुटके पो
पनिवडि इप्पटि प्रौढ़ल चदुवु ॥ नाटिकि ॥

तेलिसि इतनिनि, तेलियुटके पो
तोलुत कृतयुगादुलु चदुवु
कलिगिन नीतनि कादनने पो
कलियुगंबुलो कलिगिन चदुवु ॥ नाटिकि ॥

परमनि वेंकटपति गनुटके पो
दोरलगु ब्रह्मादुल चदुवु
सिरुल नीतनि मनचेडि कोरके पो
विरसपु जीवुल विद्यल चदुवु ॥ नाटिकि ॥

सच्ची पढ़ाई का अर्थ समझाते हैं। आजकल की पढ़ाई तो आधार-रहित है। पढ़ाई के बाद दूसरे ही दिन उसे लोग भूल जाते हैं। पुराने जमाने में 'विद्या' का अर्थ होता था – परमात्मा के तत्त्व को पूरी तरह अवगत कर लेना। लेकिन आज की विद्या तो प्रधानतया उस परतत्त्व को भूल जाने के लिए है। कृत युगादियों में 'परमात्म तत्त्व' के बारे में जानकारी रखते हुए भी अधिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रयास किये जाते थे, लेकिन इस कलियुग की शिक्षा, तो परमात्म तत्त्व को नकारने और धिक्कारने के लिए ही है। ब्रह्मादि देवताओं का पठन-पाठन तो वेंकटपति के परतत्त्व को प्रमाणित करने के लिए ही है। लेकिन आज के फीके जीवनों में अध्ययन का अर्थ – जीवन के सुख-भोगों में अपने आपको खोकर, भगवत् तत्त्व का विस्मरण ही रहा है।

* * *

४

येंतमात्रमु येव्वरु दलचिन अंतमात्रमे नीवु
अंतरांतरमुलेंचि चूड पिंडंते निप्पटि यन्नट्लु ॥ येंत ॥

कोलुतुरु वैष्णवुलु कूरिमितो विष्णुडनि
पलुकुदुरु वेदांतुलु परब्रह्मंबनुचु
तलतुरु मिमु शैवुलु तगिन भक्तुलनु शिवुडनुचुनु
अलरि पोगुड्डुरु कापालिकुलु आदिभैरवुडनुचु ।। येंत ।।

सरिनेन्नुदुरु शाक्तेयुलु शक्तिरूपु नीवनुचु
दरशनमुलु मिमु नानाविधुलनु
तलपुल कोलदुल भजिंतुरु
सिरुल मिम्मु ने यल्पबुद्धि
तलंचिन वारिकि नल्पंबवुदुवु
गरिमल मिमु ने घनमनि तलचिन घनबुद्धुलकु घनुडवु ।। येंत ।।

नीवलन कोरतेलेदु मरि नीरू कोलदि तामेरवु
आवल भागीरथि दरि बावुल आ जलमे ऊरिनयट्लु
श्रीवेंकटपति नीवैते ममु जेकोनि उन्न दैवमनि
ई वलने नी शरणनि येदनु निदिये परतत्वमु नाकु ।।येंत ।।

'जाकी रही भावना जैसी, पभु मूरति देखी तिन जैसी।'

हे अंतर्यामी! कुछ लोग तो 'विष्णु' के रूप में तुम्हारी आराधना करते हैं। वेदविद् तुम्हें 'परब्रह्म' कहते हैं। शिव, आदिभैरव, शक्ति के रूपों में भी भक्तजन तुम्हारी पूजा करते हैं। दर्शन शास्त्र तो अनेकानेक रूपों में तुम्हारा वर्णन करता है। अपनी अल्पबुद्धि से कुछ लोग, तुम्हें न्यून भाव से देखते हैं। लेकिन तुम्हें महान समझनेवालों को तो तुम 'महतोमहीयान' लगते हो। यह तो सही है कि आटा जितना हो, रोटी उतनी ही बनती है न? भागीरथी (गोदावरी) नदी के पास के कुएँ में जिस तरह उसी नदी का पानी उभरता है और जहाँ जितना पानी हो, उतने ही कमल खिलने की तरह, भक्त का हृदय जितना विशाल और विनम्र होता है, उतना ही भगवदनुभव उन्हें होगा न? इसीलिए मैं, श्रीवेंकटाचलपति को ही अपना देवता मानकर उनकी शरण में आया हूँ।

* * *

५

अय्यो पोयेम्ब्रायमु गालमु
मुय्यंचु मनसुन ने मोहमति नैति   ।। अय्यो ।।

चुट्टंबुला तनकु सुतुलु गांतलु चेलुलु
वट्टि यासल बेट्टुवारेगाक
नेट्टकोनि वीरु कडु निजमनुचु हरिनात्म
बेट्टनेरक वृथा पिरिवीकुलैति   ।। अय्यो ।।

तगुबंधुला तनकु दल्लुलुनु दंड्रुलुनु
वगल बेट्टचु तिरुगुवारे गाक
मिगुल वीरल पोंदु मेलनुचु हरि नात्म
दगिलिंचलेक चिंतापरुडनैति   ।। अय्यो ।।

अंतहितुला तनकु अन्नलुनु तम्मुलुनु
वंतु वासिकि पेनगुवारे गाक
अंतरात्मुडु श्रीवेंकटाद्रीशुगोलुवकिदु
संत कूटमुल अलजडिकि लोनैति   ।। अय्यो ।।

हरि का ध्यान छोडकर जीवन के मोह-पाशों में ही, अन्तिम समय तक व्यतीत करने के कारण यौवन और आयु - सब कुछ अब छूट गये हैं। मोह-पाश में फँसकर मैं मूर्ख मानव, सब कुछ खो दिया। पत्नी, पुत्र, सखी ये सारे बंधु नहीं हैं। बंधन हैं। इन सबको सच्चे साथी मानकर 'हरि' को मैं ने नहीं माना। माता-पिता अन्य बंधुगण ये सब फीके हैं। सगे भाई-बहन भी हों, लेकिन वे सब धन-दौलत के साझेदार ही हैं। मन-मंदिर में अंतरात्मा के रूप में बसे हुए स्वामी श्रीवेंकटेश को न पहचानकर झंझट में मैं फँस गया हूँ।

* * *

६

एक्कडि मानुषजन्मंबेत्तिन फलमेमुन्नदि
निक्कमु निन्ने नम्मिति नीचित्तंबिकनु ॥ एक्कडि ॥

मरुवनु आहारंबुनु मरुवनु संसार सुखमु
मरुवनु इंद्रिय भोगमु माधव नी माय
मरचेद सुज्ञानंबुनु मरचेद तत्त्व रहस्यमु
मरचेद गुरुवु दैवमु माधव नीमाय ॥ एक्कडि ॥

विडुवनु बापमु पुण्यमु विडुवनु ना दुर्गुणमुलु
विडुवनु मिक्किलि यासलु विष्णुड नीमाय
विडिचेद षट कर्मंबुलु विडिचेद वैराग्यंबुनु
विडिचेद नाचारंबुनु विष्णुड नी माय ॥ एक्कडि ॥

तगिलेद बहुलंपटमुल तगिलेद बहुबंधम्मुल
तगुलनु मोक्षपु मार्गमु तलपुन एंतैना
अगपडि श्री वेंकटेश्वर अंतर्यामिवै
नगि नगि नीवेलिति नाका ई माया ॥ एक्कडि ॥

जन्मों में श्रेष्ठ मानव जन्म प्राप्त होने पर भी उसका दुरुपयोग करनेवालों को सचेत किया गया है।

मानव का जन्म पाना तो अत्यंत दुर्लभ है ही। इस सत्य को जानते हुए भी मैं तुम्हारी सेवा की उपेक्षा कर रहा हूँ। आहार-विहार, इंद्रिय-सुखों को तो मैं ठुकरा नहीं पा रहा हूँ। सुज्ञान तत्त्व रहस्य तथा गुरु की महिमा को आसानी से भूल जा रहा हूँ। यह तो तुम्हारी ही माया है।

पाप, पुण्य, दुर्गुण, सुखों की तरफ आकर्षण को तो छोड नहीं पा रहा हूँ, लेकिन षृटकर्म, वैराग्य तथा आचारों को तो झट छोड रहा हूँ। यह सब हे परमात्मा! तुम्हारी माया के सिवा और क्या है ?

हर क्षण अनेक बंधनों में बंधता जा रहा हूँ, लेकिन मोक्ष के मार्ग में अपने आपको बाँध नहीं पा रहा हूँ। हे अन्तर्यामी! मेरी विवशता पर तुम हँस रहे हो न? मैं तो कहता हूँ, यह भी तुम्हारी ही माया है।

* * *

७

तंदनाना आहि तंदनानापुरे
तंदनाना भला तंदनाना ॥ तंदनाना ॥

ब्रह्ममोक्कटे परब्रह्ममोक्कटे पर
ब्रह्म मोक्कटे परब्रह्ममोक्कटे ॥ तंदनाना ॥

कंदुवगु हीनाधिकमुलिंदु लेवु
अंदरिकि श्रीहरे अंतरात्मा
इंदुलो जंतुकुल मंतानोकटे
अंदरिकि श्रीहरे अंतरात्मा ॥ तंदनाना ॥

निंडार राजु निद्रिंचु निद्रयु नोकटे
अंडने बंटु निद्र अदियू नोकटे
मेंडैन ब्राह्मणुडु मेट्टभूमि योकटे
चंडालुडुंडेटि सरिभूमि योकटे ॥ तंदनाना ॥

कडगि एनुगु मीदा गायु येंडोकटे
पुडमि शुनकमु मीद बोलयु नेंडोकटे
कडु पुण्युलनु पाप कर्मुलनु सरिगाव
बडयु श्रीवेंकटेश्वरु नाममोकटे ॥ तंदनाना ॥

परब्रह्म की सर्वाधिकता का कीर्तिगान किया गया है। इस धरती पर स्थित जीवराशि में उन्हें कोई अंतर दिखायी नहीं देता है। इनमें हीन तथा अधिक कोई नहीं है। सबों की अंतरात्मा, श्रीहरि ही हैं। महाराजा और गरीब दोनों की नींदों में असमानता नहीं होती है। (उनकी दीर्घ निद्रा में भी

कुछ भिन्नता नहीं होती है।) ब्राह्मण जिस धरती पर जीवन-यापन करता है, उसी धरती पर चंडाल भी जीवन बिताता है। गजराज पर पडनेवाली सूर्यकांति तथा शुनक पर पडनेवाली सूर्यकांति एक समान है। इसी तरह पुण्यात्माओं तथा पापात्माओं की भी रक्षा करनेवाला मात्र श्री वेंकटेश ही है।

* * *

८

इंदरिकि अभयंबुलिच्चु चेयि
कंदुवलकु मंचि बंगारू चेयि ॥ इंदरिकि ॥

वेललेनि वेदमुलु वेदकि तेच्चिन चेयि
चिलुकु गुब्बलकिंद जेर्चु चेयि
कलिकियगु भूकांत कौगिलिंचिन चेयि
पलनैन कोनुगोळ्ल वाडि चेयि ॥ इंदरिकि ॥

तनिवोक बलिचेत दानमडिगिन चेयि
ओनरंग ता दान मोसगु चेयि
मोनसि जलनिधि मम्मु मोनकु देच्चिन चेयि
येनय नागेलु धरिइंचु चेयि ॥ इंदरिकि ॥

पर सतुल मानमुलु पोल्लजेसिन चेयि
तुरगंबु बरपेडि दोड्ड चेयि
तिरुवेंकटाचलधीशुडै मोक्षंबु
तेरुवु प्राणुलकेल्ल देलिपेडि चेयि ॥ इंदरिकि ॥

भक्तों को अभयमुद्रा देनेवाले श्री वेंकटगिरीश के करकमलों की वंदना की गयी है।

वेंकटेश के सद्गुणों को, उनके करकमलों से समन्वित करते हुए अन्नमाचार्य कहते हैं कि इसी हाथ ने वेदों को ढूँढ़ बाहर लाया। भूदेवी को

अपने आलिंगन में लेकर उन्हें सांत्वना दिलायी। यद्यपि बलि महाराज से इस हाथ ने दान माँगा था, मगर सच में यही स्वयं महादानी हैं। इसीने हल को भी पकडा था तथा कुलकांताओं की रक्षा की थी। कल्कि अवतार में अश्व को भी यही चलायेगा। वेंकटाचल पर स्थित श्री वेंकटेश के रूप में, यही करकमल सकल जीवों को मोक्ष का पद भी दिलायेगा।

* * *

९

कानवच्चे निंदुलोने कारूण्य नरसिंहा
चानकमै नीकंटे दास्यमे पो घनमु ॥ कान ॥

येनसि प्रह्लादुडु एक्कड जूपुनो यनि
ननिचि लोकमेल्ल नरसिंह गर्भमुलै
पनिपूनि वुंडिनट्टु भक्त परतंत्रुडवै
तनिसि नीवधिकमो दासुले यधिकमो ॥ कान ॥

मक्कुव ब्रह्मादुलु मानुपरानि कोपमु
इक्कुवै प्रह्लादुडु येदुट निलिचितेनु
तक्कक माँनितिनट्टे दासुनि यधीनमै
निक्कि नी किंकरुडे नीकंटे बलुवुडु ॥ कान ॥

अरसि क्रम्मर प्रह्लाद वरदुडनि
पेरु पेट्टुकोंटिविट्टे बेरसि श्रीवेंकटेश
सारे नी शरणागत जनुनि काधीनमैति
नी रीति नी दासुनके इदिवो मोक्कैमु ॥ कान ॥

भगवान से बढ़कर भक्त को ही अधिक महिमावान सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है।

हे भक्तवत्सल! श्री नारसिंह! हमें यह अवगत हो गया है कि तुम से श्रेष्ठ तुम्हारा भक्त ही है। प्रह्लाद अपने पिता हिरण्यकश्यप से कहता है कि

चाहे जहाँ भी हो, वह भगवान को दिखा सकता है। तब तुमने तत्क्षण जगत के हर एक वस्तु में व्याप्त हो गये थे, ताकि जहाँ और जब चाहे प्रह्लाद, तुम्हें अपने पिता को दिखा सके। इस घटना से साफ मालुम हो गया कि भक्त ही भगवान से अधिक शक्तिमान है। जब ब्रह्मा आदि देवता भी तुम तक पहुँचने का साहस न जुटा पाये, तब प्रह्लाद ने तुम्हारे सामने आकर, उस भीषणता को कम करने का आग्रह किया और तुम उसी क्षण शांत हो गये। हे कृपालु! तुमने अपना नाम भी प्रह्लाद-वरद रख लिया है। भगवान को भक्तों के अधीन कहने के लिए इससे बढ़कर उदाहरण और क्या चाहिए? इसीलिए मैं भी आप ही के भक्तों की शरण में आना चाहता हूँ।

* * *

१०

नारायणाच्युतानंत निन्नोक चोट
कोरि वेदकनेल वीरिकल्ल कंटिवो ।। नारायणा ।।

पोलसि नी रूपमु श्रुतुललो जेप्पुगानि
बलिमि नाचार्युडैते प्रत्यक्षमु
पलिकि नी तीर्थमु भावनलंदेगानि
अल नी दासुल तीर्थमरचेत निदिवो ।। नारायण ।।

नी यानतुलेन्नडु नेमु तेलियमु गानि
मा आचार्युनि माट मंत्रराजमु
कायमुलो नीवुंडेदि कडुमरुगुलु गानि
ईयेड नी परिकरमन्निटा नुन्नदिवो ।। नारायण ।।

अरिदि नी वंदनमोकर्चावतारमुन गानि
गुरु परंपरनैते कोट्लायबो

हरि निन्नु श्री वेंकटाद्रि ने जूचिति गानि
परमुन इहमुन पंचि चूपे नितडु **॥ नारायण ॥**

गुरु (आचार्य) को भगवान से अधिक महिमावान माना गया है।

गुरु की महत्ता को सिद्ध करने के लिए अपने जीवन में घठित कुछ अनुभवों का विवरण देते हैं। सर्वाधार, नाशरहित तथा अंतरहित परमात्मा के स्वरूप के बारे में उन्हें गुरु के द्वारा ही अवगत हुआ है। भले ही श्रुतियों में भगवान के रूप का वर्णन उपलब्ध है, लेकिन परमात्मा स्वरूपी, आचार्य स्वयं उनके सामने उपस्थित हैं। गुरु को पूरी तरह जान लें, तो परमात्मा को जान लेना अत्यंत सुलभ है । हे परमात्मा! आपकी आज्ञाओं को तो हमने सुना ही नहीं, लेकिन गुरु की आज्ञा तो हमारे लिए परम पवित्र मंत्र के समान है। आप तो कहीं दूर पर हैं, लेकिन आपका उपकरण, गुरु तो हमारे सामने ही हैं। आपके अर्चावतार को तो हम एक वंदन मात्र समर्पित कर सकते हैं, लेकिन आचार्य परंपरा कोटि कोटि संख्या में होने के कारण कोटि-कोटि वंदन उन्हें समर्पित कर सकते हैं। हे स्वामी! केवल वेंकटाद्रि पर आपका दर्शन होता है, लेकिन आचार्य तो इहलोक व परलोक दोनों में साथ देते हैं। आचार्य (गुरु) की विशिष्टता यही है।

* * *

११

ओक्कडे मोक्षकर्त नोक्कटे शरणागति
दिक्कनि हरिगोल्चि बतिकिरि तोंटिवारु **॥ओक्कडे ॥**

नानादेवतलुन्नारु नानालोकमुलुन्नवि
नानाव्रतालुन्नवि नडिचेटिवि
ज्ञानिकि काम्यकर्मलुजरपि पोंदेदेयि
आनुकोन्न वेदोक्तालैना नायगाक **॥ ओक्कडे ॥**

नोक्कडु दप्पिकि द्रावु नोक्कडु कडव निंचु
वोक्कडीदुलाडु मडोगोक्कटियंदे
चक्क ज्ञानियैनवाडु सारार्थमु वेदमंदु
तक्कग चेकोनुगाक तलनेत्तुकोनुना ॥ ओक्कडे ॥

इदि भगवद्गीतार्थमिदि यर्जुनुनि तोनु
येदुटने उपदेशमिच्चे गृष्णुडु
वेदकि विनरो श्रीवेंकटेशु दासुलाल
ब्रदुकु द्रोव मनकु पार्टिचि चेकोनरो ॥ ओक्कडे ॥

'शरणागति' तत्त्व ही उत्तमोत्तम है। मोक्ष प्राप्ति के लिए श्रीहरि की शरण में गये हुए पूर्वजों की सुधि लेते हुए, देवी-देवताएँ असंख्याक हों, लोक भी अनेक हों और व्रत भी अनगिनत हों, लेकिन ज्ञानी उन सबको पाना नहीं चाहते हैं। वेदों में उन सबका विवरण भी है, परन्तु उन सभी कर्मों का फल नकारात्मक है। इसका अर्थ है – कर्मयोग के अनुसरण से जन्म का तारण नहीं होता है। सरोवर में जाकर एक व्यक्ति पानी पीकर प्यास बुझा लेता है, दूसरा घडे में पानी भर लेता है तथा तीसरा पानी में तैरता है। इसी तरह ज्ञानी वेदों के सार को जहाँ तक आवश्यक है, अवगत कर लेता है, पूरा का पूरा सर पर ढ़ोता नहीं है। इसका तात्पर्य है कि ज्ञान योग भी परिपूर्ण नहीं है। गीता के रूप में, अर्जुन को शरणागति का जो संदेश दिया गया है, वह सारी मानव जाति के लिए है तथा सभी भक्तों को आवश्यक है कि शरणागति तत्त्व को ही अनुसरणीय जानकर, परमात्मा की शरण में जायें।

* * *

१२

नाना भक्तुलिवि नरुल मार्गमुलु
ये नेपाननैना नातडिय्यकोनु भक्ति नाना ॥

हरिकिदि वादिंचुटदि उन्माद भक्ति
परुल गोलुवकुंडुटे पतिव्रता भक्ति
अरसि आत्म गनुटिदिये विज्ञान भक्ति
अरमरचि चोक्कुटे आनंद भक्ति ॥ नाना ॥

अति साहसाल पूज अदि राक्षस भक्ति
आतनि भक्तुल सेवे अदि तुरीय भक्ति
क्षितिनोक पनिंगोरि चेसुटे तामस भक्ति
आतने गतनि उंडुटदि वैराग्य भक्ति ॥ नाना ॥

अट्टे स्वतंत्रुडौटे अदि राजस भक्ति
नेट्टन शरणनुटे निर्मल भक्ति
गट्टिगा श्री वेंकटेशु कैंकर्यमे चेसि
तट्टु मुट्टु लेनिदे तग निज भक्ति ॥ नाना ॥

भक्ति के विविध मार्गों में किसी भी मार्ग का अनुसरण कर भगवान को पाना ही जीवन का तात्पर्य है।

श्री हरि का पक्ष लेकर सदैव वाद-प्रतिवाद करना 'उन्माद भक्ति' है (उदा=पेरियाल्वार)। मात्र उनकी ही पूजा करना 'पतिव्रता भक्ति' है (उदा = सभी आल्वार भक्त)। आत्मा को पहचानकर भक्ति भाव रखना 'विज्ञान भक्ति' है (उदा=पोयहै आलवार, पूदत्ताल्वार)। भक्ति की परवशता में अपने आपको खो देना 'आनंद भक्ति' है (उदा=नम्माल्वार)। जीवन में अनेकानेक अपराध करके भी सही, धन को संचित कर भगवान को समर्पित करना 'राक्षस भक्ति' है (उदा=तिरुमंगै आल्वार)। भक्तों की सदैव सेवा करना 'तुरीय भक्ति' है (उदा=तिरुमंगै आल्वार)। भगवान से संबंधित किसी विषय पर आसक्त होकर, जीवन काटना 'तामस भक्ति' है (उदा=गोदा देवी)। वैराग्य की भावना का जीवन भर अनुसरण करना 'वैराग्य भक्ति' है (उदा=कुलशेखराल्वार)। अपनी पूजा को ही सर्वश्रेष्ठ मानना 'राजस भक्ति'

है। शरणागति को ही सर्वोत्कृष्ट भक्ति मानना 'निर्मल भक्ति' है। अंत में वे कहते हैं कि जीवन को श्रीवेंकटेश को समर्पित करना ही अपना मार्ग है।

* * *

१३

चेकोंटि निहमे चेरिन परमनि
गैकोनि नीविंदु कलवे कान ॥ चेकोंटि ॥

जगमुन कलिगिन सकल भोगमुलु
तगिन नी प्रसादमुले इवि
अडपडु नेबदि अक्षरपंक्तुलु
निगम गोचरपु नीमंत्रमुले ॥ चेकोंटि ॥

पोदिगिन संसार पुत्र दारलिल
वदलिन नी दास वर्गमुले
चेदरक ये पोद्दु जेयु ना पनुलु
कदिसिन नी याज्ञकैंकर्यमुले ॥चेकोंटि ॥

नलुगड मिंचिन ना जन्मादुलु
पलुमरु लिटुनी पंपुलिवि
येलमिनि श्रीवेंकटेश्वर नीविक
वलसिनप्पुडी वरमुलु नाकु ॥ चेकोंटि ॥

इहलोक (संसार) में भी परमात्मा के तत्त्व को पहचानने की वांछा होनी चाहिए।

इस संसार के सभी सुख भगवान की ही देन हैं। समस्त अक्षर-राशि, वेदों में गोचर होनेवाले मंत्र हैं। पत्नी-संतान सब भगवान के दास-कूट के ही हैं तथा जीव के सभी कर्म भगवान के आज्ञानुसार किये जानेवाले उपचार हैं। जीवों के सभी जन्म, भगवान के संकल्प ही हैं। श्री वेंकटेश

अपनी इच्छा के अनुसार भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति करते हैं। इसी कारण कर्मों की फल-प्राप्ति के बारे में चिंता करना अनावश्यक है।

* * *

१४

इतनिकंटे मरि दैवमु गानमु येक्कड वेदकिन नितडे
अतिशयमगु महिमलतो वेलसेनु अन्निटिकाधारमु दाने
॥ इतनि ॥

मदि जलधुलनोक दैवमु वेदकिन मत्स्यावतारं बितडु
अदिवो पातालमंदु वेदकिते नादिकूर्ममीविष्णुडु
पोदिगोनि अडवुल वेदिकि चूचिते भूवराहमनि कंटिमि
चेदरक कोंडल गुहल वेदकिते श्रीनरसिंहुडुन्नाडु ॥ इतनि ॥

तेलिसि भूनभोंतरमनु वेदकिन त्रिविक्रमाकृति निलचिनदि
पलुवीरुललो वेदकिचूचिते परशुरामुडोकडैनाडु
तलपुन शिवुडुन पार्वति वेदकिन तारक ब्रह्ममु राघवुडु
केलकुल नावुल मंदलवेदकिन कृष्णुडु रामुडुनैनारु ॥ इतनि ॥

पोंसि यसुरकांतललो वेदकिन बुद्धावतारंबैनाडु
मिंचिन कालमु कडपट वेदिकिन नंतर्यामै मेरसेनु
येंचुक इहमुन बरमुन वेदकिन ईतडे श्रीवेंकटविभुडु ॥ इतनि ॥

दशावतारों के रूप में श्रीवेंकटेश की सर्वव्यापकता को निर्धारित करके सारे संसार का आधार वही भगवान कहा गया है।

जलनिधियों में मत्स्यावतार, पाताल में कूर्म, काननों में भूवराह तथा गुफाओं में श्री नारसिंह के रूप में उन्हें श्री वेंकटेश के दर्शन हुए हैं। भू-नाथ तथा आकाश में त्रिविक्रम, योद्धाओं में परशुराम, शिव-पार्वती के मनों में श्रीराम तथा गोवृन्दों में श्रीकृष्ण – ये सभी वेंकटगिरि के ही रूप हैं।

बुद्धावतार से संबंधित एक उत्सुकतापूर्ण अंश इसमें उल्लिखित है। अतिभयंकर त्रिपुरासुरों का संहार करना, महाविष्णु को बहुत भारी पडा। इसका कारण है – उनकी पत्नियों के पातिव्रत्य की महिमा। निस्संतान उन पतिव्रताओं को संतान दिलाने का वचन देकर, उन्हें बुद्ध के रूप में (कपट वटु) विष्णु एक पीपल के पेड के पास ले आते हैं। इस वृक्ष का आलिंगन करने से उसको संतान की प्राप्ति होगी' – बालक की बातें सुनकर, वे सुहागिनियाँ यह सोचकर वृक्ष से लिपट जाती हैं कि वृक्ष से लिपट जाने से इनका व्रत भंग नहीं होगा। लेकिन उस समय उस पेड में साक्षात् श्री महाविष्णु के होने के कारण उनका 'व्रत भंग' हो जाता है। (तत्त्वोपहार– श्री नल्लान चक्रवर्तुल रघुनाथाचार्य पृष्ठ १५६) परिणामतया त्रिपुरासुरों का संहरण सुगम हो जाता है।

अन्नमय्य के बाद बुद्धावतार का यह वर्णन श्रीकृष्णदेवरायलु की रचना आमुक्तमाल्यदा में मिलता है।

* * *

१५

अन्निटिकि मूलमनि हरिनेंचरु
पन्निन मायलो वारु बयलु वाकेरु ।। अन्निटिकि ।।

प्रकृति बोनुल लोपल जिक्कि जीवुलु
अकट चक्कनि वारमनुकुनेरु
सकल पुण्य पापालसंधि जन्ममुलवारु
वेकलि संसारालके वेडुक पडेरु ।। अन्निटिकि ।।

कामुनियेट्ल दगगारेटि देहुलु
दोमटि तम बतुके दोड्डु दनेरु
पामिडि कोरिकलकु बंट्लैनवारलु
गामिडितनाल दामे कर्तलमनेरु ।। अन्निटिकि ।।

इतर लोकालनेडि एतपु मेट्ल प्राणुलु
कतल मोक्षमार्गमु गंटिमनेरू
तति नलमेल्मंग पति श्रीवेंकटेश्वर
मतकाननुन्नवारू मारुमल पेरू ।। अन्निटिकि ।।

संसार के बंधनों में लिपटे हुए जीवों के प्रति चिंता प्रकट की गयी है।

भौतिक प्रकृति, सत्त्व, रज तथा तमो गुणों से युक्त है। जीव तो सदा मुक्त ही होता है। लेकिन जब वह प्रकृति के संपर्क में आता है, तो वह उन अवगुणों के अधीन हो जाता है। विष्णुपुराण में कहा गया है कि जीवों के कर्म ही उनके जन्मों के आधार हैं। इसी भाव को दोहराते हुए अन्नमाचार्य कहते हैं कि पुण्य-पाप रूपी कर्मों का अनुसरण करते हुए, उनके कारण जीव अनेकानेक जन्म लेते हैं। सुख-दुःखों के क्षणिकानंद का भी वे आनंद लेते हैं।

इच्छाओं के अधीन हो, 'सभी कर्मों के कर्ता स्वयं को ही वे मान रहे हैं। 'ढ़ेकी' की तरह जीव अपने कर्मों का फल आप ढ़ो रहे हैं।' अंततः अन्नमाचार्य कहते हैं कि सच में, जगत् का सकल जीव-समूह, अलमेलमंगापति श्री वेंकटेश की माया में बद्ध होकर इस संसार की परिक्रमा कर रहे हैं।

* * *

१६

निन्नू नन्नू नेंचुकुनि नेरमि गाक
पन्निन सूर्युनि कांति प्रति सूर्युडौना ।। निन्नू ।।

जलधि लोपल मीनु जलधि तानौना
जलमुलाधारमैन जंतुवु गाक

नेलवै नीलोनिवाड नीवे नेनौदुना
पोलसि नीयादरुवु बोम्मनिंतेगाक ।। निन्नू ।।

राजुवद्दनुन्न बंटु राजे तानौना
राजसपु चनवरि रचनेगाक
साजमै निन्नु गोलिचि सरिगद्दे नुंदुना
वोज तो निन्नु सेविंचिवुंदु निंतेगाक ।। निन्नू ।।

मुत्तेपु चिप्पल नीरु मुन्निटिवले नुंडुना
मुत्तेमुलै बलिसि लो मोनपुगाक
नित्तेपु श्रीवेंकटेश नी शरणागतुलमु
मोत्तपु लोकुलनू मुक्कुलमु गामु ।। निन्नू ।।

भक्त तथा भगवान की भिन्नता का विवेचन किया गया है।

हे वेंकटेश! हम दोनों का 'एक रूप' समझना अपराध है। सूर्य की कांति को सूर्य की संज्ञा दे सकते हैं क्या? जलधि में जीवित मछली स्वयं जलधि नहीं बन सकती है। वह जलधि पर आधारित जीव-मात्र है। परमात्मा से रचित प्राणी, परमात्मा कैसे बन सकता है? महाराजा का सेवक, कभी स्वयं महाराजा नहीं बन सकता है। वह मात्र एक सेवक है। सीप में स्थित पानी, फिर से सदा पानी नहीं हो सकता है। मगर वह बूँद, मोती का रूप धारण अवश्य कर लेती है। इसी तरह जीव भी भगवान के संपर्क में आकर शरणागत हो सकते हैं, लेकिन स्वयं भगवान नहीं हो सकते हैं।

* * *

१७

येट्टि वारिकि नेल्ल निट्टि कर्ममुलु मा
येट्टि वारिकि निंक नेदि तोवय्या ।। येट्टि ।।

पामु जंपिनयट्टि पातकमुन पेद्द
पामुमीद नीकु बवलिंचवलसे
कोमलि जंपिन कोरत वल्ल
कोमलि नेदबेट्टुकोनि युंडवलसे ॥ येट्टि ॥

बंडि विरिचिनट्टि पातकमुन पेद्द
बंडि बोयिडवै पतिसेयवलसे
कोंडवेदिकिनट्टि गुणमुन तिरुमल
कोंडमीद नीकु गूचुंडवलसे ॥ येट्टि ॥

'व्याजस्तुति' वर्णित है।

हे स्वामी! जैसी करनी-वैसी भरनी' का सूत्र आपके जीवन में भी सत्य निकला है। फिर हम जैसे साधारण जीवों का क्या कहना?

हे स्वामी! यमुना नदी में जो सर्पराज था, उसका घमंड चकनाचूर कर, उसका संहार करने के कारण, आपको शेषनाग पर ही सदा आसीन होना पड रहा है । पूतना का संहार करने का फल आपको यह निकला कि एक स्त्री (लक्ष्मी देवी) को जीवन-भर वक्षःस्थल पर धरना पडा। बचपन में शकटासुर को दो टुकडे करना आपको भारी पडा। अर्जुन के वाहन का सारथ्य इसीका फल है न? गोवर्धन पर्वत को उखाड, ऊँगली पर खडा करने का फल है, आपका तिरुमल पर यह निवास।

इन सभी वक्तव्यों का अंतस्सूत्र है – वेंकटाधीश की प्रशंसा करना।

* * *

१८

ब्रह्मा कडिगिन पादमु
ब्रह्ममु ताने नी पादमु ॥ ब्रह्मा ॥

चेलगि वसुध गोलिचिन नी पादमु
बलि तलमोपिन पादमु

तलकक गगनमु तन्निन पादमु
बलरिपु गाचिन पादमु ॥ ब्रह्मा ॥

कामिनि पापमु कडगिन पादमु
पामुतलनिडिन पादमु
प्रेमपु श्रीसति पिसिकेडि पादमु
पामिडि तुरगपु पादमु ॥ ब्रह्मा ॥

परम योगुलकु परि परि विधमुल
परमोसगेडि नी पादमु
तिरुवेंकटगिरि तिरमनि चूपिन
परम पदमु नी पादमु ॥ ब्रह्मा ॥

श्री वेंकटेश के चरण की महत्ता का वर्णन किया गया है । इस चरण को स्वयं ब्रह्मा ने धोया है। यह तो स्वयं 'ब्रह्म' है। बलि के सर पर रखकर 'वसुधा' को इसी चरण ने नापा था। गगन को एक ही कदम से धक्का देकर, रिपु बलि की रक्षा भी इसने की। देवेन्द्र के वृत्तांत में शापग्रस्त अहिल्या के पाप को धोकर उसे विमुक्त करना तथा कालिंदी नदी में 'सर्पराज' के घमंड को चकनाचूर करना – इसी चरण की विजय गाथाएं हैं। श्री लक्ष्मीजी इस चरण की सेवा सदा करती है। तुरग पर आरूढ़ होनेवाला चरण भी यही है। योगि श्रेष्ठों को अनेक रीतियों में मोक्ष प्रदान करनेवाले इसी चरण ने मुझे मोक्ष द्वार तिरुवेंकटगिरि का दर्शन करवाया है।

* * *

१९

अदिवो अल्लदिवो श्री हरि वासमु
पदिवेल शेषुल पडगल मयमु ॥ अदिवो ॥

अदे वेंकटाचल मखिलोन्नतमु
अदिगो ब्रह्मादुल कपुरूपमु

अदिगो नित्य निवास मखिल मुनुलकु
अदे चूडुडदे म्रोक्कु डानंदमयमु ॥ अदिवो ॥

चेंगट नल्लदिवो शेषाचलमु
निंगिनुन्न देवतल निजवासमु
मुंगिट नल्लदिगो मूलनुन्न धनमु
बंगारु शिखराल बहुब्रह्ममयमु ॥ अदिवो ॥

कैवल्य पदमु वेंकटनगमदिवो
श्रीवेंकटपतिकि सिरुलैनवि
भाविंप सकल संपद रूपमदिवो
पावनमुलकेल्ल पावनमयमु ॥ अदिवो ॥

सहस्राधिक शेष फणियों से युक्त श्री हरिवास (तिरुमल) का रोमांचक वर्णन मिलता है।

ब्रह्मादियों के लिए अपूर्व वेंकटाचल के निरालेपन का आविष्कार करते हुए वे कहते हैं कि (श्रीहरि निवास होने के कारण) सकल मुनिबृंद का भी आवास स्थान, उस आनंदमय शिखर को नमस्कार करो। यह शेषाचल स्वर्गलोक के देवी-देवताओं का भी स्वस्थान हो गया है। स्वर्ण शिखरों से शोभायमान बहुब्रह्ममय यह शिखर, भक्तजनों के लिए प्राप्त अनायास संपदा है। मुक्ति पद दिलानेवाला यह वेंकटाचल, श्रीवेंकटपति का भाग्य निधान है। सकल भाग्यों का स्वरूप यह तिरुमल गिरि पवित्रतम है।

* * *

२०

कोंडा चूतमु रारो कोंडोक तिरुमल कोंडा ॥ कोंडा ॥

कोंडनि अडिगिन वरमुलोसगु मा
कोंडल तिम्मय कोंडा ॥ कोंडा ॥

पोदलु सोंपगु निंपुल पू पोदलू वासन नदुलू
पोदलु गल तामर केलकुल पै मेदलु तुम्मेदलु
कदली मलयानिलु वलपुल पस कदली वनमुलु
मोदलगु एल्लप्पुडु नी संपदलुगल मा कोंड ॥ कोंडा ॥

शुकमुलतो चदुवुदुरा शुक ब्रह्मादुलु सुतुलु
तकधिम्मनि आडिंचु मयूरततिनि योगीश्वरुलु
सकल पुराणंबुल विंदुरु मरि पिक शारिकलचे मुनुलु
मोदलुग नेल्लप्पुडु नी संपदलुगल मा कोंड ॥ कोंडा ॥

तलचिन शुक शौनकादुलकु तलचिन तलपोसगुनु
तलपु लोपल नेलकोन्न दयतो मम्मेलिन
चेलुवुडु मा वेंकटरायडु सिरुल नेलवु चेकोन्न
कलियग वैंकुंठंबनु नाममु कलिकि वेलयु मा कोंडा ॥ कोंडा ॥

तिरुमलगिरि की सुंदरता का मनहारी वर्णन मिलता है।

तिरुमल की अवलोकनीय, अनोखी सुंदरता का वर्णन करके सभी भक्तों को स्वागत किया गया । 'लो ले लो, कहते हुए पूछ पूछकर वरदान देनेवाले उस गिरि के हरि को देखने आओ अवश्य। फल भरी झाडियों से भरी गिरि में, सुगंध की नदियाँ बहती रहती हैं और उनमें बहुत सारे कमल खिलते हैं और उन पर भृंगों के बृंद मंडराते रहते हैं। कदली वनों में (केलों के वृक्ष) मलयानिल मंद-मंद चलता रहता है। शुक शौनक ब्रह्मादि, शुक वृन्दों से पाठ सीखते हैं। योगीश्वर, मोरों को नृत्य सिखाते रहते हैं। सारिकाओं तथा कोयलों से पुराण सुनते हैं – मुनिवर! इन सभी सुंदर तथा कमनीय संपदाओं से तिरुमल संपन्न है। शुक-शौनक मुनि इस गिरि पर भावुक हो, रचनाएं करने में मग्न दिखायी देते हैं। भक्त सुलभ श्री वल्लभ करुणाकर हैं श्री वेंकटेश। वे साक्षात् कल्पतरू हैं। उनका स्थिर निवास है, यह गिरिवर! इसीलिए यह कलियुग पर बसा हुआ वैकुंठ है।

* * *

२१

कोंडललो नेलकोन्न कोनेटिरायडु वाडु
कोंडलंत वरमुलु गुप्पेडुवाडु ॥ कोंडललो ॥

कुम्मर दासुडैन कुरुवरति नंबि
इम्मन्न वरमुलेल्ल इच्चिनवाडु
दोम्मुलु सेसिनयट्टि तोंडमान् चक्कुरवर्ति
रम्मन्न चोटिकि वच्चि नम्मिन वाडु ॥ कोंडललो ॥

अच्चपु वेडुकतो ननंतालुवारिकि
मुच्चिलि वेट्टिकि मन्नु मोसिनवाडु
मच्चिक दोलक तिरुमलनंबि तोडुत
निच्च निच्च माटलाडि नच्चिनवाडु ॥ कोंडललो ॥

कंचिलोन नुन्न तिरुकच्चिनंबि मीद, करु-
णिंचि, तनयेडकु रप्पिंचिन वाडु
येंच नेक्कुडैन वेंकटेशुडु मनलकु
मंचिवाडै करुण पालिंचिनवाडु ॥ कोंडललो ॥

श्रीवेंकटेश की भक्तवशंकरता का उल्लेख किया गया है। उन-उन भक्तों के नाम लेते हैं, जो तिरुमल के इतिहास से जुडे हुए हैं।

श्री वेंकटेश्वर गिरि पर विराजमान हैं। वे 'पुष्करिणी प्रिय' हैं। गिरि सम वरदानों को भी स्वामी बरसाते हैं। कुम्हार कुरुवरति नंबी को (जो माटी से फूल बनाकर स्वामी को समर्पित करता था) उसने जो मांगा, वह सब कुछ अतिदयालु स्वामी ने दे दिया था। तोंडमान चक्रवर्ती, पुराने जमाने में, श्री वेंकटेश के लिए मंदिर तथा शिखर का निर्माण कर ब्रह्मोत्सवों का भी आयोजन किया था। उससे स्वामी को अत्यंत अनुराग था। वह जहाँ भी जब भी बुलाता था, स्वामी वहाँ अवश्य जाते थे। अनंताल्वान् ने तिरुमल स्वामी को हर दिन परिमल भरित पुष्पमालाओं की सेवा समर्पित करने के

लिए एक जलाशय का निर्माण करने का निर्णय ले लिया। उसके महदाशय की पूर्ति के लिए अपने उस भक्त को माटी ढ़ोने में, स्वामी ने हाथ बंटा था। स्वामी के मन में अपने भक्तों के प्रति अनंत वत्सलता के लिए ऐसे अन्य कई उदाहरण भी हैं। 'तिरुमल नंबी' श्री वेंकटेश के नित्याभिषेक के लिए हर दिन दस मील की दूरी पर स्थित पापविनाशन तीर्थ से पवित्र जलों को लाया करते थे। पैदल जाकर कलशों में तीर्थ जलों को सर पर रखकर लानेवाले उस महाभक्त की परीक्षा लेने के लिए व्याध के रूप में पवित्र जल के घडे को अपने तीर से मारकर श्रीवेंकटेश ने छेद किया। तिरुमल नंबी, व्याध की आकतायी चेष्टा से व्याकुल हो, रो पडे कि उनके सेवा-कैंकर्य में आज संकट आ पडा है। अपने भक्त की वेदना को मिटाने के लिए श्री वेंकटेश ने अपने तीर से वहीं एक पर्वत की दरी में छेदकर आकाश गंगा के पवित्र स्रोत की सृष्टि की तथा स्वयं अंतर्धान हो गये। आज भी उस महाभक्त के वंशजों का तिरुमल में प्रथम तीर्थ कैंकर्य का गौरव प्राप्त है। 'तिरुकच्चिनंबी' जो कांची क्षेत्र में रहा करता था, उस पर भी स्वामी की अपार करुणा थी। हे स्वामी! हम भक्तों पर भी अवश्य करुणा की वर्षा करो।

* * *

२२

इप्पुडिटु कलगंटि एल्ल लोकमुलकु
नप्पडगु तिरुवेंकटाद्रीशुगंटि ॥ इप्पुडिटु ॥

अतिशयंबैन शेषाद्रि शिखरमु गंटि
प्रतिलेनि गोपुर प्रभलुगंटि
शतकोटि सूर्यतेजमुलु वेलुगग गंटि
चतुरास्यु पोडगंटि चय्यन मेलुकोंटि ॥ इप्पडिटु ॥

कनकरत्न कवाट कांतुलिरुगडगंटि
घनमैन दीपसंघमुलु गंटि

अनुपम मणिमयमगु किरीटमु गंटि
कनकांबरमु गंटि ग्रक्कन मेलुकोंटि ।। इप्पडिटु ।।

अरुदैन शंखचक्रादुलिरुगड गंटि
सरिलेनि अभय हस्तमुनुगंटि
तिरुवेंकटाचलाधिपुनि जूडग गंटि
हरि गंटि गुरुगंटि नंतट मेलुकंटि ।। इप्पुडिटु ।।

अन्नमाचार्य, अपने रोमांचक स्वप्नानुभव का वर्णन कर रहे हैं, जिसमें उन्हें तिरुवेंकटाधीश का अलौकिक दर्शन हुआ।

सपने में सर्वप्रथम, उन्होंने अति उन्नत शेषाद्रि शिखर को देखा। तदनंतर उन्हें मंदिर की अनुपम प्रभायें दिखायी दीं। शतकोटि कांतियों के बीच चतुरानन के दर्शन हुए। ततक्षण रत्नखचित स्वर्ण द्वार की कांतियों ने उन्हें चकाचौंध कर दिया। सामने ही रखे हुए बृहत् दीपस्तंभों को उन्होंने देखा। उस कांति में अमूल्य मणियों से जडित स्वामी का किरीट उन्हें दिखायी दिया। उसके बाद कनकांबरधारी प्रभु अनुपम शंख तथा चक्र दोनों हाथों में लिए, सामने प्रत्यक्ष हुए। अन्नमाचार्य का हृदय हर्षपुलकित हो गया और उसी तत्परता में कहने लगे – मुझे एक साथ हरि और गुरु का दर्शन हो गया, क्योंकि वे ही मेरे गुरु भी हैं।' इस भावविभोर स्थिति में वे जाग गये।

* * *

२३

देहि नित्युडु देहमुलनित्यालु
हल ना मनसा इदि मरुवकुमी ।। देहि ।।

गुदि पात चीरमानि कोत्तचीर गट्टिनट्टु
मुदि मेनु मानि देहि मोगि कोत्तमेनु मोचु

अदन जंपग लेवु आयुधमु लीतनि
गदिपि अग्नियु नीरु गालि चंपगलेवु ॥ देहि ॥

ईतडु नरकुवडडीतडग्निगालडु
ईतडु नीटमुनगडीतडु गालिबोडु
चेतनुडै सर्वगतुडौ चलियिंचडेमिटनु
ईतल्ल ननादि ईतडिरवु गदलडु ॥ देहि ॥

चेरि कानरानिवाडु चिंतिंच रानिवाडु
भारपु विकाराल बासिनवाडी आत्म
अरय श्री वेंकटेशु नाधीन मीतडनि
सारमु तेलियुटये सत्यमु ज्ञानमु ॥ देहि ॥

आत्मा के शाश्वत तत्त्व को सहारते हुए उसके श्रीवेंकटेश के सदा अधीन में रहने का विवरण दिया गया है।

जिस तरह कपडों को बदला जाता है, उसी तरह आत्मा भी देहों को बदलती रहती है। आत्मा को आयुध, अग्नि, पानी तथा हवा आदि मार नहीं सकते हैं। जीवात्मा के चेतनत्व, सर्वगमनत्व, अनादित्व का उपनिषदों में कथित रूप में ही अन्नमाचार्य वर्णन कर रहे हैं।

गीता के 'वासांसि जीर्णानि' 'नानुशोचितुमर्हसि' आदि श्लोकों के तात्पर्य का अनुसरण कर, गीता पर अपने अटल विश्वास को वे प्रकट करते हैं। आत्मा (देहि) शाश्वत है। देह अशाश्वत है। हे मन! इसे सदैव याद रखना। पुराने फटे वस्त्रों को त्यागकर नये वस्त्रों को पहनने की तरह आत्मा भी नये देहों का धारण करती है। किसी तरह के आयुध अग्नि, नीर, पवन आदि इसे मार नहीं सकते हैं। आत्मा सदा सर्वदा चेतनता से भरी रहती है। वह सर्वगतिमान तथा अनादि है। वह अव्यक्त, अचिंत्य तथा विकार रहित है। वह सदा श्री वेंकटेश्वर के अधीन में रहती है। इस सत्य का सार ग्रहण करना ही ज्ञान है।

* * *

२४

सहज वैष्णवाचार वर्तनुल
सहवासमे मा संध्या ॥ सहज ॥

अतिशयमगु श्रीहरि संकीर्तन
सततंबुनु मा संध्या
मति रामानुज मतमे माकुनु
चतुरत मेरसिन संध्या ॥ सहज ॥

परम भागवत पद सेवनमे
सरवि नेत्र का संध्या
सिरिवरु महिमलु चेलुवोंदग वे
सरक विनुटे मा संध्या ॥ सहज ॥

मंतुकेक्क तिरुमंत्र पठनमे
संततमुनु मा संध्या
कंतु गुरुडु वेंकटगिरि रायनि
संतर्पणमे मा संध्या ॥ सहज ॥

अपनी संध्योपासना के लक्षणों को, वैष्णवाचारों के साथ अन्वय करके विवरण प्रस्तुत किया गया है।

निर्मल वैष्णव भक्तों का सहवास ही मेरी संध्या-गायत्री है। सर्वदा श्रीहरि के नाम-गुण-संकीर्तन ही मेरी संध्योपासना है। भगवद्रामानुज के सिद्धांतों को सकुशल व्याप्त करना ही मेरी संध्या है।

परम भागवतों की पदसेवा तथा लक्ष्मीनाथ की महिमाओं का चारों पहर श्रवण करना ही मेरी आराधना है। सदा तिरुमंत्र (अष्टाक्षरी) का मनन तथा मदन-जनक, वेंकटगिरीश को संतुष्ट करना ही मेरी संध्योपासना है।

* * *

२५

विश्वरूपमिदिवो विष्णुरूपमिदिवो
शाश्वतुलमैतिमिंक जयमु ना जन्ममु ॥ विश्व

कोंडवंटि हरिरूपु गुरुतैन तिरुमल
पंडिन वृक्षमुले कल्पतरुवुलु
निंडिन मृगादुलेल्ल नित्यमुक्त जनमुलु
मेंडुग प्रत्यक्षमाये मेलुवो ना जन्ममु ॥ विश्व ॥

मेडवंटि हरिरूपु मिंचैन पैडि गोपुर
माडनेवालिन पक्षुलमरुलु
वाडल कोनेटि चुट्ल वैकुंठनगरमु
ईड माकु पोडसूपे इहमेपो परमु ॥ विश्व ॥

कोटि मदनुलवंटि गुडिलो चक्कनि मूर्ति
ईटुलेनि श्रीवेंकटेशुडितडु
वाटपु सोम्मुलु मुद्र वक्षपुटलमेल्मंग
कूटुवैनन्नेलिति एक्कुव वो ना तपमु ॥ विश्व ॥

तिरुमल शिखरों और वैकुंठ की समानता का आविष्कार किया गया है।

श्रीहरि के बृहदाकार का प्रतीक है – तिरुमल गिरि। फलों के भार से विनम्र, वहाँ के वृक्ष ही कल्पतरु हैं। वहां के वनों में वास कर रहे जीव-जंतु भी नित्य-मुक्त मनुज हैं। इन सबों को देख पाना मेरा सौभाग्य है। विशाल भवन सा हरि का आकार मंदिर का शिखर है तथा कहीं दूर से उड आकर शिखर पर आसीन विहंग अमरकोटि है। पुष्करिणी के चारों तरफ फैला हुआ नगर, वैकुंठ सा दृश्यमान होने से ऐसा लग रहा है कि इस धरा पर ही 'परतत्व' सा बस गया है। कोटि मदनाकार श्रीहरि ही मंदिर में प्रतिष्ठित

श्रीवेंकटेश हैं। वक्षःस्थल में अलमेल्मंगा समेत विविध अमूल्य आभरणों से अलंकृत स्वामी के दर्शन से मेरी तपस्या का फल मुझे मिल गया है।

* * *

२६

नमो नमो दानव विनाश चक्रमा
समर विजयमैन सर्वेशु चक्रमा || नमो ||

अट्टे पदारु भुजाल नमरिन चक्रमा
पट्टिन आयुधम्मुल बलु चक्रमा
नेट्टन सूडुकन्नुल निलिचिन चक्रमा
रट्टगा मन्निंचवे मेरयुचु चक्रमा || नमो ||

अरयनारु कोणाल नमरिन चक्रमा
धारलु वेयिटितोडी तगु चक्रमा
आरक मीदिकि वेल्ले अग्नि शिखल चक्रमा
गारवान नी दासुल गाववे चक्रमा || नमो ||

रविचंद्रकोटि तेज राशियैन चक्रमा
दिविज सेवितमैन दिव्य चक्रमा
तविलि श्रीवेंकटेशु दक्षिणकर चक्रमा
इवल नी दासुलमु येलुकोवे चक्रमा || नमो ||

श्री महाविष्णु के सुदर्शन चक्र को साक्षात् श्रीवेंकटेश्वर का ही रूप मानकर उसका अभिवादन किया गया है।

सुदर्शन चक्र को संबोधित करते हुए वे कहते हैं – षष्टादश भुजाओं में विविध आयुधों से अलंकृत हे सुदर्शन चक्र! तीन आँखों, षट्कोणों, सहस्र छोरों से, अग्नि को बरसाते हुए, राक्षसों का संहार तुम करते हो। कोटि सूर्य और चंद्रकांति से सुशोभित तुम्हारी सेवा कर रहे हैं – सारे देवी-

देवतायें। श्री वेंकटेश्वर के दक्षिण कर-कमल को अलंकृत सदा तुम करते रहते हो। अब अपने इन दासों की रक्षा करो।

* * *

२७

नरहरि नी दयमीदट ना चेतलु गोन्ना
शरणागतियुनु जीवुनि स्वतंत्रमु रेंडा ॥ नरहरि ॥

मेरयुचु नरकपु वाकिलि मूसिरि हरि नी दासुलु
तेरचिरि वैकुंठपुरमु तेरवुल वाकिल्लु
नुरिपिरि पापमुलन्नियु नुग्गुग निट्टु तूर्पेत्तिरि
वेरवमु वेरवमु कर्मपु विधुलिक माकेला नरहरि ॥

वापिरि ना यज्ञानमु परमात्मुड नी दासुलु
चूपिरि निनु ना मतिलो सुलभमुगा नाकु
रेपिरि नीपै भक्तिनि, रेयिनि बगलुनु नालो
वोपमु वोपमु तपमुल ऊरिके इकनेला ॥ नरहरि ॥

दिद्दिरि नी धर्ममुनकु देवा श्री वेंकटेश्वर
अद्दिरि नी दासुलु नी यानंदमुलोन
इद्दरि नी ना पोंदुलु येर्पेरचिट्टुवले गूर्चिरि
वोद्दिक वोद्दिक नाकिक उद्योगमुलेला ॥ नरहरि ॥

शरणागति तथा जीव की स्वतंत्रता से 'भागवत-निष्ठा' ही उच्चतम है।

आनंदविभोर होते हुए वे परमात्मा से कहते हैं कि हरिदासों ने हम भक्तों के लिए 'नरक द्वार को बंद कर, 'वैकुंठ द्वार' को खोल रखा है। हमारे किये हुए पापों को उन्होंने जड से उखाड भी दिया। अब पाप और पुण्य कर्मों के फलों के बारे में सोचकर चिंतित होने की आवश्यकता ही क्या है? हे परमात्मा! तुम्हारे भक्तों ने मेरे अज्ञान को भी मिटाकर, तुम्हें मेरे मन ही में

बिठाया है तथा तुम्हारे प्रति भक्ति को भी मेरे मन में उन्होंने ही जगाया है। तो अब जप-तपों की आवश्यकता कहाँ है? हे स्वामी! उन भक्तों ने मेरे चरित्र को भी इस तरह सुधारा है, ताकि मैं सदैव भागवत धर्म का अनुसरण करता रहूँ। ब्रह्मानंद के माधुर्य को भी चखाकर, हम दोनों का मिलन भी उन भक्तों ने रचाया है। तो फिर अब मुझे अन्य व्यवसायों की आवश्यकता ही क्या है ?

* * *

२८

नीवे नेरवु गानी, निन्नु बंधिंचेमु मेमु
दैवमा! नीकंटे नी दासुले नेर्परुलु ॥ नीवे ॥

वट्टि भक्ति नीमीद वलुकु वेसि निन्नु
बट्टि तेच्चि मति लोन बेट्टुकोंटिनि
पट्टेडु तुलसि नी पादालपै बेट्टि
जट्टिकोनिरि मोक्षमु, जाणलु नी दासुलु ॥ नीवे ॥

नीवु निर्मिंचिनवे नीके समर्पण सेसि
सोवल नी कृपयेल्ल जूरगोंटिमि
भाविंचोक म्रोक्कु मोक्कि भारमु नीपै वेसिरि
पावनपु नी दासुले पंतपु चतुरुलु ॥ नीवे ॥

चेरुवुल नील्लु देच्चि चेरेडु नीपै जल्लि
वरमु वडसितिमि वलसिनट्लु
इरवै श्री वेंकटेश! इटुवंटि विद्यलने
दरि चेरि मिंचिरि, नी दासुलु पो घनुलु ॥ नीवे ॥

श्री वेंकटेश के भक्तों की कुशलता का विवरण दिया गया है।

वे कहते हैं कि मात्र भक्ति के सम्मोहन से, हमने तुमको हृदय में बाँधकर रखा। मुट्ठी भर 'तुलसी' दलों को तुम्हारे चरणों पर डाला, बदले में मोक्ष को पा लिया! देखो, कितने चतुर हैं ये तेरे भक्त?

तुम्हारी वस्तुओं को तुम्हीं को समर्पित कर, बदले में तुम्हारी अपार कृपा के योग्य बन जाते हैं हम! एक नमस्कार करते हैं। हमारा पूरा भार तुम्हीं पर डाल देते हैं। देखो, हमारी चालाकी!

तालाब से हथेली मात्र पानी ला, तुम पर छिडकते हैं तथा मुँहमाँगे वरदान तुम से पाते हैं। देखो! कितने चतुर हैं हम। अब तुम्हारे पास आ गये हैं। अब तो मानो कि तुम्हारे भक्त तुम से भी सयाने हैं।

* * *

२९

कंटि शुक्रवारमु गडिय लेडिंट
अंटि अलमेल्मंग अंडनुंडे स्वामिनि ॥ कंटि ॥

सोम्मुलन्नि कडबेट्टि सोंपुतो कोणमुगट्टि
कम्मनि कदंबमु कप्पु पन्नीरु
चेम्म तोन वेष्टुवलु रोम्मु तल मोल चुट्टि
तुम्मेद मै चाय तोन नेम्मदिनुंडे स्वामिनि ॥ कंटि ॥

पच्च कप्पुरमे नूरि पसिडि गिन्नेल निंचि
तेच्चि सिरसादिग दिग नलदि
अच्चेर पडि चूड अंदरि कन्नुलकिंपै
निच्चमल्ले पूवुवले निटु तानुंडे स्वामिनि ॥ कंटि ॥

तट्ट पुनुगे कूर्चि चट्टलु चेरिचि निप्पु
पट्टि करगिंचि वेंडि पल्यालनुंचि
दट्टमुग मेनु निंड पट्टिंचि दिद्दि
बिट्टु वेडुक मरियुचुंडे बित्तरि स्वामिनि ॥ कंटि ॥

प्रति शुक्रवार की प्रातः तिरुमल के मूलविराट स्वामी की मूर्ति का जो अभिषेक किया जाता है, उसे देखते समय अन्नमाचार्य के मन में उठी भावनाओं का चित्रण प्रस्तुत किया गया है।

शुक्रवार की प्रातः, स्वामी के सभी आभूषण निकालकर, सुगंध द्रव्यों में भिगोये परिधानों से (वेष्ठि) उनके वक्षःस्थल शिरोभाग तथा कटिभाग को अलंकृत किया गया है। इस समय स्वामी अतिनीलवर्ण में (भ्रमरों का नील वर्ण) शोभायमान हैं। अब्दसार (हरा कपूर) के चूर्ण को सुवर्ण पात्रों में भरकर लाया गया है तथा स्वामी का आमूल शरीर इससे विलेपित किया गया है। अब स्वामी नित्य मल्लिका (एक प्रकार की चमेली) फूलों की तरह आकर्षक हैं। कस्तूरी को चाँदी की थालियों में लाकर, स्वामी के शरीर भागों में 'अंगरंग' की तरह लगाया गया है। इस लेपन से स्वामी का शरीर प्रकाशमान है। इस तरह विविध मंगल-द्रव्यों से अलंकृत श्री वेंकटेश की दिव्य मंगल मूर्ति अलमेल्मंगा के साथ विराजमान है।

* * *

३०

चालदा हरिनाम सौख्यामृतमु तमकु
चालदा हितवैन चवुलेल्ल नोसग ॥ चालदा ॥

इदियोकटि हरिनाममिंतैन चालदा
येदरकी जन्ममुल चेरलु विडिपिंच
मदि नोकटे हरिनाम मंत्रमदि चालदा
पदिवेलु नरक कूपमुल वेडलिंच ॥ चालदा ॥

कलदोकटि हरिनाम कनकाद्रि चालदा
तोलगुमनि दारिद्र्य दोषंबु चेरुच
तेलिवोकटि हरि नाम दीपमदि चालदा
कलुषंपु कठिन चीकटि पारद्रोल ॥ चालदा ।.

तगु वेंकटेशु कीर्तन मोकटि चालदा
जगमुलो कल्प भूजंबुवलेनुंड
सोगसि ई विभुनि दासुल करुण चालदा
नगवु जूपुलनु नुन्नत मेपुडु जूप ॥ चालदा ॥

हरिनाम की महिमा का विवरण दिया गया है।

मात्र एक हरि नाम ही जन्म-जन्मों के बंधनों से छुटकारा दिला सकता है। हजारों नरक-कूपों के भय से मुक्ति, हरिनाम से ही मिलती है।

दरिद्रता के दोषों के निवारण के लिए, हरिनाम रूपी कनकाचल पर्याप्त है। विकारों के अंधकार से उजाले की तरफ प्रगति 'हरिनाम' रूपी दीप से हो सकती है। जगत् में 'कल्पतरु' की भाँति, सभी कामनाओं की पूर्ति, यह स्मरण करता है। उत्तम जीवन मार्गों को दिखाने के लिए, हरि भक्तों की करुणा ही पर्याप्त है।

* * *

३१

भारमैन वेपमानु पालुवोसि पेंचिनानु
तीरनि चेदेगाक तिय्यनुंडीना ॥ भारमैन ॥

पायदीसि कुक्कतोक बद्दलु वेट्टि बिगिसि
चायकेंत गट्टिनानु चक्कगुंडीना
कायपु विकारमिदि कलकालमु जेप्पिना
पोयिन पोकलेगाक बुद्धि विनीना ॥ भारमैन ॥

मुंचिमुंचि नीटिलोन नान बेट्टकुन्ना
मिंचिन गोड्डलि नेडु मेत्तनय्यीना
पंच महापातकाल बारिबड्ड चित्तमिदि
दंचि दंचि चेप्पिनानु ताकि वंगीना ॥ भारमैन ॥

कूरिमितो तेलु देच्चि कोकलोन बेट्टकुन्ना
सारे सारे कुट्ट गाक चक्कनुंडीना
वेरुलेनि महिमल वेंकटविभुनि कृप
घोरमैन आस मेलुकोरि सोकीना ॥ भारमैन ॥

कितने भी प्रयत्न करें, इस मन को काबू में लाना, कठिन होता जा रहा है।

नीम के पौधे को, पानी के स्थान पर दूध देकर अच्छी तरह पोषण करने पर भी उसके पत्ते तो कडुवे ही होते हैं। कुत्ते की पूँछ को लकडियों से बाँधकर, सीधा करने का यत्न करें, तोभी कुछ लाभ नहीं होता है। उसी तरह अनेकानेक विकारों का आदी होने के कारण बुद्धि हमारी बातों को सुनती ही नहीं है। कुल्हाडे को चाहे कितने ही दिन पानी में भिगोकर रखने पर भी, उसमें कोमलता नहीं आती है। इसी तरह पाप कर्मों की मानव-प्रवृत्ति, कितने भी मार खायें, बदलती नहीं है। बिच्छू को प्यार से पालकर साडी में लिपटकर रखें, तोभी वह अपनी प्रकृति को छोड नहीं पाता है तथा बार-बार डंक मारता ही है। इसी तरह इस पापी मन को, आदि अंत रहित श्री वेंकटेश की महिमाओं को बार-बार सुनायें, तोभी वह अपने स्वभाव को छोडता नहीं है।

* * *

३२

आ रूपमुनके हरि नेनु मोक्केदनु
चेरि विभीषणुनि शरणागतुडनि चेकोनि सरि गाचितिवि ॥

फाललोचनुडु ब्रह्मयु निंद्रुडु
सोलि अग्नियुनु सूर्य चंद्रुलुनु
नीलोनुंडग नेरिगेने किरीटि
मूलभूति वगु मूर्तिवि गान ॥ आ रूप ॥

अनंत शिरसुल अनंत पदमुल
अनंत नयनमुल अनंत करमुल
घन नी रूपमु कनुगोने किरीटि
अनंत मूरिति वन्निट गान ॥ आ रूप ॥

जगमुलन्नियुनु सकल मुनीन्द्रुलु
अगु श्री वेंकटनाथुड निन्ने
पोगडग किरीटि पोडगने नी रूपु
अगणित महमिुड वन्निट गान **।। आ रूप ।।**

शरणागति तत्त्व की महत्ता का वर्णन किया गया है।

'हे वेंकटेश! संपूर्ण शरणागति में आये हुए विभीषण की रक्षा जिस रूप में आपने की थी, आपके उसी रूप को मेरा नमस्कार है। फाललोचन (शिव), ब्रह्मा, इंद्र, अग्नि, सूर्य तथा चंद्रादि देवताओं को आपके जिस रूप में किरीटी (अर्जुन) ने देखा या ('विश्वरूप' के संदर्भ में) उसी रूप को मेरा प्रणाम है। कइयों शीश, कइयों नेत्र तथा कइयों चरणों से, इस चराचर सृष्टि में व्याप्त आपके जिस रूप को अर्जुन ने देखा था, उसी रूप को मेरी विनयांजलि है। आपकी महिमा अमेय है। हे प्रभु! सभी लोकों तथा सकल मुनिगणों को आपके जिस रूप की स्तुति करते हुए अर्जुन ने देखा था, उसी आपके रूप को, मेरा शत-शत नमन है।

* * *

३३

चूचे चूपोकटि गुरियो कटि
चाचि रेंडू नोकटैते दैवमे सुंडी **।। चूचे चूपोकटि ।।**

एनुगु दलचिते एनुगै पोडसूपु
मानु दलचिते नट्टे मानै पोडचूपु
पूनि पेद्द कोंड तलपोय कोंडै पोडचूपु
ताने मनोगोचरुडु दैवमे सुंडी **।। चूचे ।।**

बट्टबयलु दलच बयलै पोडचूपु
अट्टे यंबुंधि दलच नंबुधियै पोडचूपु

पट्टणमु दलचिन पट्टणमै पोडचूपु
तट्टि मनोगोचरुडु दैवमेसुंडी ।। चूचे ।।

श्री वेंकटाद्रि मीदि श्रीपति दलचितेनु
श्री वेंकटाद्रि श्रीपतै पोडचूपु
भावमे जीवात्म, प्रत्यक्षमु परमात्म
तावु मनोगोचरुडु दैवमे सुंडी ।। चूचे ।।

साधक की दृष्टि और लक्ष्य एक हो, तो उसी रूप में परमात्मा का साक्षात्कार अवश्य होगा।

परमात्मा को अगर 'गजराज' समझा जाय, तो वे गजराज बनकर सामने आते हैं। अगर उन्हें महावृक्ष के रूप में देखेंगे, तो वे महान वृक्ष बन जाते हैं। महान पर्वत के रूप में भावना करेंगे, तो भगवान महान पर्वत बन जाते हैं। खुली प्रकृति में, जलनिधि में उनके अस्तित्व का अनुभव चाहें, तो उसी तरह पा सकते हैं। उन्हें एक महानगर मानेंगे, तो उसी रूप में उनका साक्षात्कार हमें होगा। श्री वेंकटाद्रि पर स्थित श्री वेंकटेश के रूप में उनकी उपासना करेंगे, तो वैसे ही हमें दर्शन देंगे। हमारी भावना ही जीवात्मा है तथा हमें साक्षात्कार होनेवाला रूप परमात्मा है। इसका तात्पर्य है, 'जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी, तिन जैसी'।

* * *

३४

मुनुल तपमुनदे मूलभूतियदे
वनजाक्षुडु गति वलसिननु ।। मुनुल ।।

नरहरि नाममु नालुकनुंडग
परमोकरि नडुग पनियेल
चिर पुण्यमु नदे जीव रक्षयदे
सरुग गाचु नोकसारि नुडिगिना ।। मुनुल ।।

मनसुलोनने माधवुडुंडग
वेनुकोनि योकचो वेदुकग नेटिकि
कोनकु कोनयदे कोरेडि ददिये
तनुदा रक्षिंचु दलचिननु ॥ मुनुल ॥

श्री वेंकटपति चेरुवनुंडग
भाव कर्ममुलु भ्रमयग नेटिकि
देवुडु नतडे तेरुवू नदिये
कावलेनंटे कावक पोडु ॥ मुनुल ॥

अपने आश्रितों की रक्षा श्रीवेंकटेश अवश्य करते हैं।

मृनि बृंदों की तपस्या का लक्ष्य है– उस गिरिधारी की सन्निधि। वह नलिनाक्ष आश्रितों का रक्षक है। उस नरहरी के नाम का जप करनेवालों के लिए, अन्य देवी-देवताओं से मुक्ति की याचना करने की आवश्यकता ही नहीं है। उस श्रीहरि का स्मरण ही, चिरंतन पुण्य को प्रदान करता है तथा सदा सर्वदा अपने भक्तों की रक्षा करता है। सर्वांतर्यामी माधव तो मन में ही स्थित है। उसको ढूँढ़ने की आवश्यकता नहीं है। सच्चे पथ को हमें दिखानेवाले श्री वेंकटेश का आश्रय हमें मिलें, तो भाव तथा कर्मों के भ्रम, हमें बाधित नहीं करते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि मन तथा देह से शरणागत होकर अपनी सेवा करनेवाले भक्तों की, श्री वेंकटेश अवश्य रक्षा करते हैं।

* * *

३५

मोदलुंड कोनलकु मोचि नील्लु वोयनेल
एदलो नीवुंडगा नितरमुलेला ॥ मोद ॥

निगममार्गमुन ने नडचनंटे
निगमुलेल्लनु नी महिमे
जगमु लोकुल जूचि जरिगेदनंटे
जगमुलु नी मायाजनकमुलु ॥ मोद ॥

मनसेल्ल नड्डपेट्टि मट्टन नुंडेनंटे
मनसु कोरिकलु नी मतकालु
तनुवु निंद्रियमुलु तग गेलिचेनंटे
तनुवुनिंद्रियमुल दैवमु! नी महिम **॥ मोद ॥**

इंतलोकि परिकिगा इंदुनंदु जोरनेल
चेंतनिंडु चेरुवुंड चेलमलेला
पंतान श्री वेंकटेश! पट्टि नीके शरणंटि
सतकूटाल धमपु संगति नाकेला? **॥ मोद ।**

साक्षात् भगवान जब सामने खडे हैं, तब अन्यों के सहारे के लिए कोई क्यों तरसे?

जब वृक्ष का मूल सामने है, तो शाखाओं को पानी देने की मूर्खता क्यों? कुछ लोग कहते हैं – 'हमारा वैदिक मार्ग है।' क्या वे नहीं जानते हैं कि वेदों का अस्तित्व, तुम्हारी करुणा पर ही आधारित है। कुछ तो कहते हैं – 'जगत की रीति ही हमारा मार्ग है,' जब कि त्रिभुवन तुम्हारी माया से ही जन्मे हैं। कुछ लोग तो, सारी वांछाओं को, दबाकर जीने में बडप्पन मानते हैं। लेकिन यह तो खुली हुई बात है कि तुम्हारी इच्छा से ही वे खुद जन्मे हैं। कोई तो चाहता है कि शरीर तथा इन्द्रियों को वश में रखना चाहिए। इस सबों का सृजन तुम्हीं ने किया है न? परमार्थ को पहचानने के लिए इधर-उधर क्यों भटकें? सरोवर जब सामने है, तो कूप को खोदने की आवश्यकता है क्या? जो भी हो, वेंकटेश! मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ। धर्म-विपणियों से मेरा क्या लेना-देना है कहो?

* * *

३६

अंतर्यामि अलसिति सोलसिति
इंतट नी शरणिदे चोच्चितिनि **॥ अंतर्यामि**

कोरिन कोर्कुलु कोयनि कट्लु
तिरवु नीवनि तेंचका
भारपु पग्गालु पाप पुण्यमुलु
नेरुपुल बोनीवु नीवुवद्दनका अंतर्यामि ॥

जनुल संगमुलन् जक्क रोगमुलु
विनु विडुववु नीवु विडिपिंचका
विनयपु दैन्यमु विडुवनि कर्ममु
चनददे नीविटुनंत परचका ॥ अंतर्यामि ॥

मदिलो चिंतलु मैललु मणुगुलु
वदलवु नीववि तद्दनका
एदुटने श्रीवेंकटेश्वर नीवदे
अदनंगाचितिवि अट्टिट्टनका ॥ अंतर्यामि ॥

श्रीवेंकटेश के चरणकमलों में अपने आपको पूर्णतया समर्पित किया गया है ।

बडी दीनता तथा विनम्रता से, जीवन के प्रति अपनी निरसक्तता को प्रकट करते हुए वे कहते हैं – हे प्रभु! मैं पूरी तरह पराजित होकर तुम्हारे पास आया हूँ। अब तुम ही मेरी रक्षा करो।

इस शरीर को बाँध रखनेवाले पाप-पुण्य रूपी बंधन, अब भारी पड गये हैं। तुम्हारी आज्ञा क़े बिना ये दूर हटनेवाले नहीं है। ये रिस्ते-नाते, कर्म-फल, अस्वस्थता-दीनता, मैल-संस्कार– ये भी तुम्हारी आज्ञा के सिवा छूटनेवाले नहीं हैं। हे कृपालु प्रभु! तुम तो मेरे सामने ही खडे हो। अब तो तुम्हारे सिवा मुझे कुछ नहीं चाहिए। मुझे तुम्हारा आश्रय दो।

* * *

३७

गतुलन्नि खिलमैन कलियुगमंदुन
गति ईतडे चूपे घनगुरुदैवमु ॥ गतुलन्नि

ईतनि करुणनेगा इल वैष्णवुल मैति
मीतनि वल्लने कंटिमी तिरुमणि
ईतडे का उपदेशमिच्चे नष्टाक्षरि मंत्र
मीतडे रामानुजुलु इह पर दैवमु ।। गतुलन्नि ।।

वेलयिंचे नितडे का वेदपु रहस्यमुलु
चलिमि नीतडे चूपे शरणागति
निलिपिनाडीतडे का निजमुद्राधारणमु
मलसि रामानुजुले माटलाडे दैवमु ।। गतुलन्नि ।।

नियममुलीतडेगा निलिपे प्रपन्नुलकु
दयतो मोक्षमु जूप दयनीतडे
नयमै श्रीवेंकटेशु नगमेक्के वाकिटनु
दयजूची मम्मुनिट्टे तल्लिदंड्रि दैवमु ।। गतुलन्नि ।।

अन्नमाचार्य अपने गुरु घनविष्णु (दीक्षा गुरु) के प्रति अपने आदर तथा गौरव-सम्मान को प्रकटित करते हैं।

आचार्य की करुणा से ही वैष्णव धर्म का उन्हें परिचय मिला तथा त्रिपुंड्र एवं मंत्रों की दीक्षा वे ले पाये। इसीलिए वे ही उनके 'भगवद रामानुज' हैं। (भगवद् रामानुज श्री वैष्णव धर्म के महान प्रवर्तक तथा प्रचारक थे।) शरणागति तत्त्व के बारे में उन्हें बताकर मोक्ष मार्ग को दिखाये हुए, अपने आचार्य की अपार करुणा की स्तुति वे करते हैं। इसे ही आचार्य का प्रथम लक्षण बताते हुए अन्नमाचार्य कहते हैं कि माँ का प्यार, पिता का अनुशासन तथा भगवान की अनुकंपा – इन तीनों लक्षणों का संगम, आचार्य में देखा जा सकता है। इसीलिए परब्रह्म को पाने का मुख्य द्वार आचार्य ही हैं।

* * *

३८

पट्टिनदेल्ला ब्रह्ममु
दट्टपु जडुडिकि दैवंबेला ॥ पट्टिन ॥

धनयाचनकु कनकमे ब्रह्ममु
तनुवे ब्रह्ममु तरुवलिकि
येनयगामुकुनकिंतिये ब्रह्ममु
तनलो वेलिगे तत्वंबेला ॥ पट्टिन ॥

आकलि वानिकि नन्नमे ब्रह्ममु
लोकमे ब्रह्ममु लोलुनिकि
कैकोनि कर्मिकि कालमे ब्रह्ममु
श्रीकांतुनिपै चिंतदियेला ॥ पट्टिन ॥

भुवि संसारिकि पुत्रुले ब्रह्ममु
नवमिंदरिकिदि नडचेदि
इवलनु श्रीवेंकटेशु दासुलकु
भवमतनि कृपे ब्रह्ममु ॥ पट्टिन ॥

ब्रह्म पदार्थ का विविध रीतियों में विश्लेषण किया गया है।

भगवत् तत्त्व के बारे में जानने की उत्सुकता जिनमें नहीं होती है, उनके लिए तो ब्रह्म पदार्थ, उनकी रुचि के अनुसार ही होता है। उदाहरण के लिए धनयाचक की दृष्टि में ब्रह्म पदार्थ तो सुवर्ण ही है। जल्लाद का ब्रह्म तो शरीर ही है - जैसे फांसी चढ़ाने में ही उसे तृप्ति मिलती है। कामुक तो स्त्रियों के सौंदर्य में तथा शरीर में ही, ब्रह्म पदार्थ के दर्शन करा लेता है। भूखे का ब्रह्म है - खाना। सुखरोगी का ब्रह्म है – यह संसार! गृहस्थी - पुत्रों को पाना ही - ब्रह्म प्राप्ति समझता है। इन सबों की दृष्टि में, अपने अंदर जागृत ब्रह्म तत्त्व के ज्ञान की (या भगवदोपासना की) आवश्यकता ही नहीं है। किंतु श्री वेंकटेश के दासों के लिए, उनकी कृपा ही ब्रह्म है।

* * *

३९

इदे शिरसु माणिक्य मिच्चि पंपे नीकु नापे
अदनेरिगि तेच्चिति अवधरिंचवय्या ॥ इदे ॥

राम! निनुबासि नी राम नेजूडग ना
राममुन निनुबाडे 'राम राम' यनुचु
आ मेलत सीतयनि यपुडु ने देलिसि
नी मुद्र उंगरमु नेनिच्चिति ॥ इदे ॥

कमलाप्तकुलुड! नी कमलाक्षि नी पाद
कमलमुल दलपोसि कमलारि दूरे
नेमकि या लेमने नीदेवियनि तेलिसि
अमरंग नी सेममिटु विन्नविंचिति ॥ इदे ॥

दशरथात्मज नीवु दशशिरुनि जंपि आ
दशनुन्न चेलिकावु, दशदिशलु पोगड,
रसिकुड, श्री वेंकट रघुवीरुड नीवु
शशिमुखि जेकोंटिवि चक्कवाय पनुलु ॥ इदे ॥

रामावतार की एक घटना प्रस्तुत की गयी है। हनुमान का अशोकवाटिका में प्रवेश कर सीता-साध्वी का दर्शन कर लेना, राम के आगमन का आश्वासन उन्हें देकर, उनकी शिरोमणि फिर से वन में स्थित राम को देने का वर्णन है। इस गीत में 'राम', 'कमल' तथा 'दश' शब्दों का विविधार्थों में सुंदर प्रयोग किया गया है।

हे राम! आपकी रामा (स्त्री, पत्नी) उस आराम (वाटिका) में राम-नाम का जप करती हुई बैठी थी। उन्हें इस दिशा में देखकर मैंने झट पहचान लिया तथा आपके द्वारा दी गयी 'मुद्रिका' को उन्हें दे दिया।

हे कमलाप्त (सूर्य) कुल तिलक राम ! आपकी कमलाक्षि (कमल सम आँखोंवाली पत्नी) आपके पद कमलों का स्मरण करती हुई, आपके

विरह में दुबली-पतली होकर कमलारि (चंद्रमा) को कोस रही थी। उन्हें ही आपकी पत्नी जानकर, आपके कुशल समाचार देकर आया हूँ।

हे दशरथात्मज! (दशरथ के पुत्र) इस दस सिरोंवाले रावण का वध शीघ्र ही कीजिये तथा दश-दिशाओं में गुंजित जय जयकारों के बीच दीन-दशा में कुंठित सीता की रक्षा कीजिये!

हे रसिक वेंकटेश! राम के अवतार में, सीता साध्वी, उस शशिमुखी को अपनाकर शांति को बनाये रखने का श्रेय आप ही का है।

* * *

४०

नानाटि बदुकु नाटकमु
कानक कन्नदि कैवल्यमु ॥ नानाटि ॥

पुट्टटयु निजमु पोवुटयु निजमु,
नट्ट नडिमि पनि नाटकमु
एट्टनेदुटगलदी प्रपंचमु
कट्ट कडपटिदि कैवल्यमु ॥ नानाटि ॥

कुडिचेदन्नमु कोक चुट्टेडिदि
नड्डुमंत्रपु पनि नाटकमु
वोडिगट्टुकोनिन उभयकर्ममुलु
गडिदाटिनपुडे कैवल्यमु ॥ नानाटि ॥

तेगदु पापमु तीरदु पुण्यमु
नगि नगि कालमु नाटकमु
एगुवने श्री वेंकटेश्वरु डेलिक
गगनमु मीदिदि कैवल्यमु ॥ नानाटि ॥

इस जीवन तथा संसार को नाटक कहते हुए श्री वेंकटेश की शरण में जाना ही उत्तम मार्ग बताया गया है।

हर दिन हम जो जीवन बिता रहे हैं, वह सब नाटक ही है। जिसकी इच्छा करते हैं तथा जिसे पाने का प्रयत्न कर, अंततः पा लेते हैं, वह क़ैवल्य (मोक्ष) है। मात्र जनन तथा मरण ही सत्य है। इन दोनों के बीच जो कुछ होता है, वह सब नाटक ही है। प्रत्यक्षतः दिखायी देनेवाला विश्व है, उसे पारकर मोक्ष को पाना है। खाने से पेट भर लेना तथा कपडे से तन को ढ़क लेना – इन दोनों क्रियाओं के बीच का व्यवहार ही नाटक है, जो जीवन कहलाता है। प्रारब्ध तथा संचित – ये दोनों कर्म हैं, जिन्हें हम प्रयत्नपूर्वक पाते हैं, जो पाप और पुण्य कहलाते भी हैं। इन दोनों के दूर हो जाना ही 'मोक्ष' है। समय हमारी आँखों के सामने ही बीत जाता है – हँसते हँसते! इसीलिए इस क्षणिक जीवन में, हम तो कुछ नहीं पा सकते हैं। जो कुछ पाना है, पाने की संभावना है, वह सब मोक्षपद प्राप्त करने पर ही साध्य है, जिसके स्वामी श्री वेंकटेश स्वयं हैं।

* * *

४१

दीनुड नेनु देवुडवु नीवु नी
निज महिमे नेरपुटगाक ॥ दी ॥

मति जननमेरुग मरणम्बेरुगनु
इतवुग निनु निक नेरिगेना
क्षिति बुट्टिंचिन श्रीपतिवि नीवे
तति नापै दय दलतुवु गाक ॥ दी ॥

तलच पापमनि तलच पुण्यमनि
तलपुन इक निनु दलचेना
अलरिन नालो अंतर्यामिनि
कलुषमेडय ननु गातुवुगाक ॥ दी ॥

तडव ना हेयमु तडव ना मलिनमु
तडयक नी मेलु तडवेना

विडुवलेनि श्री वेंकटविभुडवु
कडदाकनिक गातुवुगाक ॥ दी ॥

इस रचना में शरणागति तत्त्व का विवरण दिया गया है।

हे वेंकटेश! तुम देवता हो! मैं तो दीन हूँ, अनाथ हूँ। मैं तुम्हारी महिमा की व्याप्ति करूँगा। जनन, मरण का ज्ञान मुझे कुछ भी नहीं है। मुझ में विवेक ईषन्मात्र भी नहीं है। तुम्हें कैसे पहचान सकूँगा कहो! इस संसार में जन्म लेने का कारण तो तुम्हीं हो! अगर कुछ जरूरत पडे, तो मुझ पर दया रखो! पाप-पुण्यों का भी कुछ ज्ञान मुझे नहीं है। तुम्हारा स्मरण कैसे करूँगा कहो! मेरे अंदर नित्य प्रकाशमान होनेवाले अंतर्यामी तुम ही हो हे स्वामी! मेरे पाप का विनाश करो! शुद्धता तथा मलिनता का ज्ञान जिसमें नहीं हो, वह तुम्हारा स्मरण कैसे कर सकेगा? लेकिन मैं, एक मूर्ख मानव, तुम्हें तो छोड नहीं सकता! हे वेंकटेश! मुक्ति दिलाने तक, मेरी रक्षा करना भी तुम्हारा ही कर्तव्य है।

* * *

४२

मोवुल चिगुरुल चिम्मुल वेदमु
आवुल मंदललोनि आ वेदमु ॥ मो ॥

मंचमुपै चदिवेदि मरुवकुमी
जा कोंचेपु लेबल्कुल कोनवेदमु
पिंचेपु शिरसुतोड पिन्ननाडे चदिविन,
तुंचि तुंचिन माटल तोलुवेदमु ॥ मो ॥

चल्ललम्मे गोल्लेतल चक्कनि जंकेनलकु
गोल्लपल्लेलोन दोरकोन्न वेदमु
तल्लिबिड्डलनक यंदरिनोक्कवानिगा
पिल्लग्रोविनेरिपिन वेदमु ॥ मो ॥

पंकज भवादुल पडि पडि चदिविंचे
लंकेलु चेरगिन मेलपु वेदमु
वेंकटनगमु मीद वेलयनिंदिर गूडि
कोंकक चदिविन चोक्कुल वेदमु ॥ मो ॥

श्रीकृष्ण को ही वेद के रूप में अभिहित किया गया है।

गोवृंद में विचरते हुए नवपल्लवों जैसे अधरों की कांति को प्रसारित करनेवाले वंशी मोहन ही साक्षात् वेद स्वरूप हैं। अवसान दशा में अवश्य, इस वेद को पढ़ना ही है। नवोदित शिशु की तुतली बोली की तरह – श्रीकृष्ण रूपी यह वेद भी अत्यंत सूक्ष्म तथा गौरवपूर्ण है। शिखिपिंछ के साथ मधुरमधुर शब्दों को निकालनेवाला यह वेद छोटी आयु में ही अत्यंत आदरणीय है।

वृन्दावन की गलियों में दही बेचनेवाली गोप वनिताओं की धमकियों की अधीनता में आया हुआ यह वेद, अपने वेणुविन्यास में गांधर्व गीतों को सुना रहा है। उस संगीत से एक आनंदमय ब्रह्मानुभव का आभास हो रहा है, जिसमें आपसी संबंधों के लिए स्थान नहीं है। उस मधुर भाव से सम्मोहित होकर गोपिकाएँ, उस परमात्मा को घेरी हुई हैं।

हर एक सृष्टि में, ब्रह्मादि देवताओं को 'ज्ञान' प्रदान करने का नियम रखनेवाला यह 'वेंकटेश' रूपी वेद, लक्ष्मीदेवी के साथ असीमित सुखों का अनुभव करते हुए, वेंकटगिरियों पर विहरण कर रहा है।

* * *

४३

वाडल वाडल वेंट वाडिवो वाडिवो
नीडनुंडि चीरलम्मे नेत बेहारि ॥ वाडल ॥

पंचभूतमुलनेडि पलुवन्नेनूलु
चंचलपुगंजिवोसि चरिसेसि

कोंचेपु कंडेल मुनिगुणमुलनेसि
मंचि मंचि चीरलम्मे मारु बेहारि ॥ वाडल ॥

मटमायमुल दन मगुव पसिडिनीरु
चिटि पोटि यलुकल जिलिकिंचगा
कुटिलंपु जेतलु कुच्चुलुगा गट्टि
पटवाली चीरलम्मे बलु बेहारि ॥ वाडल ॥

मच्चिक कर्म मनेटि मैल संतललोन
वेच्चपु कर्म धनमु वेलुवचेसि
पच्चडालुगा गुट्टि बलुवेंकटपति
इच्च कोलदुल नम्मे इंटि बेहारि ॥ वाडल ॥

भक्ति तत्त्व, भक्त के लक्षण श्रीवेंकटेश की महानता उनके दासों का सेवकत्व आदि अनेकानेक अंशों के साथ, यत्र-तत्र, उनके सामाजिक दृष्टिकोण के भी उदाहरण मिलते रहते हैं। इस रचना की भी यही विशेषता है।

देहातों में साडी बेचनेवालों को हम देखते ही रहते हैं। रंगीन साडियों को लेकर निकलनेवाले व्यापारियों को, अन्नमाचार्य ने भी एक बार देखा, तो उन्हें लगा, देह रूपी रंगीन वस्त्रों को पंचभूतात्मक तत्त्वों से बनाकर – इसी तरह लोगों की दृष्टि को आकर्षित करते हैं – वेंकट-रमण स्वामी! उसी क्षण इस गीत का आविर्भाव हुआ होगा।

यहाँ – वेंकटेश रूपी जुलाहा - सदा छाँव में ही साडियों को लेकर निकल पडता है - गलियों में! साडियों को बुनने की इसकी कला तो अनुपम है। पंचभूत तत्त्वों (पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश) युक्त सूत का उपयोग करते हुए, चंचलता की मांडी में अहराकर, फिर से सद्गुणों की गुच्छों में पिरोकर लाजवाब साडियों को यह जुलाहा बुनता है।

उसकी सति, जो माया नटि है तथा रूठ प्यार आदि गुणों से विलसित है (लक्ष्मी) कनक-नीर लाकर साडियों पर छिडकती है। कुटिल कोशिशों के झब्बों की तरह बाँधकर वह उन विशिष्ट साडियों को बेचता है।

सम्मोहित करनेवाले कर्मों से बनी, मैली मंडियों में, संचित-फलों के कर्म धन की कीमत पर, मनमाने ढ़ंग में, चेलांचलों को शेष-शैल स्वामी बेचता-फिरता है।

तिरुमलेश को, एक कुशल जुलाहे के रूप में देख पाना अन्नमाचार्य जैसे भक्त की भगवान से अत्यंत निकटता का भी द्योतक है।

* * *

४४

चेरि कोल्वरो ईतडु श्रीदेवुडु
ई रीति श्री वेंकटाद्रि निरवैन देवुडु ॥ चेरि ॥

अलमेलुमंग नुरमंदिडुकोन्न देवुडु
चेलगु शंख चक्राल चेति देवुडु
कल वरद हस्तमु कटिहस्तपु देवुडु
मलसि श्रीवत्स वनमालिकल देवूडु ॥ चेरि ॥

घनमकरकुंडल कर्णमुल देवुडु
कनक पीतांबर श्रृंगार देवुडु
ननिचि ब्रह्मादुल नाभिगन्न देवुडु
जनिंचे पादाल गंग संगतैन देवुडु ॥ चेरि ॥

कोटि मन्मथाकार संकुलमैन देवुडु
जूटपु किरीटपु मिंचुल देवुडु
वाटपु सोम्मुलतोटि वसुधापति देवुडु
ईदुलेनि श्री वेंकटेशुडैन देवुडु ॥ चेरि ॥

श्रीवेंकटगिरि पर विराजमान श्री वेंकटेश के आभरण विशेष तथा रूप लावण्य का वर्णन किया गया है।

अन्नमाचार्य भक्तों से कह रहे हैं कि वेंकटगिरीश जो लक्ष्मीवल्लभ हैं, उनकी शरण में जाओ! उनके वक्षःस्थल में अल्मेल्मंगा हैं। शंख तथा चक्रायुध से अलंकृत वह स्वामी वरद तथा कटि हस्तों से शोभित हैं। श्रीवत्स तथा वनमालिका से विलसित श्री वेंकटेश, अतुलित कांतियुक्त मकरकुंडलों के कर्णाभूषण पहने हुए हैं। स्वर्णमय पीतांबर में स्वामी, 'श्रृंगार श्रीनिवास' के रूप में दर्शन दे रहे हैं। ब्रह्मादि देवताओं की सृष्टि का मूल, नाभिकमल से युक्त स्वामी के चरण तल से ही 'विरजा नदी' (गंगा) का उद्भव होता है। कोटि कोटि मन्मथाकार, जटाजूट पर विशेष कांतिमय मुकुट का धारण किया हुआ स्वामी, अति अमूल्य आभूषणों से अलंकृत स्वामी तथा भूदेवी के पतिदेव, इस श्रीनिवास स्वामी की शरण में जाओ!!

* * *

४५

ये कुलजुडैन येव्वडैन नेमि
आकड नातडे हरिनेरिगिनवाडु ॥ ये ॥

परगिन सत्य संपन्नुडैनवाडे
परनिंद सेय तत्परुडु कानिवाडु,
अरुदैन भूतदयानिधि यगु वाडे
परुलु दानेयनि भाविंचुवाडु ॥ ये ॥

निर्मलुडै आत्मनियति कल्गुवाडे
धर्म तत्पर बुद्धि दगिलिन वाडु
कर्म मार्गमुलु तडवनिवाडे
मर्ममै हरिभक्ति मरुवनिवाडु ॥ ये ॥

जगतिकै हितमुगा जरियिंचु वाडे
पगलेक मतिलोन ब्रतिकिनवाडु
तेगि सकलमु नात्म तेलिसिन वाडे
तगिलि वेंकटेशु दासुडैनवाडु ॥ ये ॥

हरि के भक्त कहलाने के लक्षण बताये गये हैं।

सदा सर्वदा दूसरों की निंदा न करनेवाले, सत्य-पालन करनेवाले, अन्य जीवों पर दया रखनेवाले तथा दूसरों को भी अपने समान समझनेवाले ही 'हरि के भक्त' कहलाते हैं।

सदा धर्म-तत्परता रखनेवाले, अपनी आत्मा को निर्मल रखनेवाले तथा किसी भी स्थिति में हरि के प्रति भक्तिभाव को रखकर विनीत होनेवाले ही 'हरि भक्त' कहलाते हैं। समाज के हित के बारे में सोचनेवाले, दूसरों के प्रति घृणा न रखनेवाले, 'आत्मा' की स्थिति का ज्ञान रखनेवाले ही 'हरि के भक्त' हैं। इसका अर्थ है, चाहे वह किसी धर्म का हो, जात का हो, ये सभी लक्षण होने मात्र से वह 'हरि भक्त' कहलाता है। दूसरे अर्थ में 'भक्त', धर्म तथा जात से कई गुना विशिष्ट है।

* * *

४६

वेन्नचेतबट्टि नेयि वेदकनेला
इन्निटि नेंचि चूचिते निदिये विवेकमु ॥ वेन्न ॥

नी दासुलुन्न चोट नित्यवैकुंठमिदे
वेदतो वेरोकचोट वेदकनेला
आदिगोनि वारिरूपलवियें नी रूपुलु
पोदि निन्नुमदि तलपोयनेला ॥ वेन्न ॥

वारलतोडि माटलु वडिवेदांत पठन
सारेनट्टि चदुवुलु चदुवनेला

चेरिवारि करुणे चेपट्टिन मन्ननलु
कोरि इंतकंटे मिम्मु कोसरनेला ।। वेन्न ।।

ना विन्नपमु निदे नारदशुकादुलुनु
यी विधमुनने आनतिच्चिनारु
श्री वेंकटेश नीवु चेपट्टिन दासुलकु
कैवशमे यी बुद्धि कडमेला ।। वेन्न ।।

भक्तजनों की निकटता को ही भगवान की निकटता कहा गया है।

जब नवनीत सम भक्त सामने हो, तो घृत-सम भगवान को ढूँढ़ने की आवश्यकता ही क्या है? आगे वे कहते हैं कि भक्तजन जहां रहते हैं, वही वैकुंठ है। जब भक्त तथा भगवान में अंतर नहीं है, तो फिर भगवान का ध्यान क्यों करें? भक्तों से वार्तालाप ही वेदांत-चर्चा है। अन्य ग्रंथों के अध्ययन की आवश्यकता नहीं है। उनकी करुणा ही भगवान को हमारे हाथों में ला सौंपती है। नारद शुकादि मुनिवरों के कथनानुसार श्री वेंकटेश के भक्तों की शरण में जाना ही, उन्हें पाना है।

* * *

४७

इदिये परमयोग मिद्दरिकि विभुडा
अदन नलिचिन दृष्टांत मायनिपुडु ।। इदिये ।।

वेलि मनमिद्दरमु वेरै वुंदुमु गानि
तलपु लोपलनु इद्दरमोक्कटे
वोलिसि युद्धमुलोन नोकरूपे रेंडै
तेलिसिनंतने दृष्टांतमिपुडु ।। इदिये ।।

पेरुलिद्दरिकिनि निट्टि भेदमै तोचीगानि
तारुकाणगुणमु लिद्दरिकोक्कटे

कोरिन माटोकटे कोंडकललो रेंडवु
तेरि चूडनिदि येदो दृष्टांतमिपुडु **॥ इदिये ॥**

श्री वेंकटेश नी ना चेतले वेरुगानि
केवलमिद्दरिकी कागिलि ओकटे
पूलंगुत्ति ओकटे पूवुलु वेरैनट्लु
देव इन्निटिकि दृष्टांतमिपुडु **॥ इदिये ॥**

प्रिय तथा प्रिया की एकात्मता की ओर संकेत करते हुए भक्त तथा भगवान की एकात्मता को स्थापित किया गया है।

अन्नमाचार्य अपने आपको प्रेमिका के रूप में प्रस्तुत करते हैं। भले ही दोनों के रूप अलग हैं, परंतु मन तो एक ही है। दोनों की भावनाएँ एक हैं। गुण एक हैं। दोनों के कर्म विभिन्न होते हुए भी आलिंगन एक ही है। विविध वर्णों के फूलों से एक ही पुष्पमंजरी को बनाया जा सकता है। ये सभी दृष्टांत निरूपित कर रहे हैं कि भक्त तथा भगवान की एकात्मता ही विशिष्ट योग है।

* * *

४८

दिब्बलु वेट्टुचु तेलिन दिदिवो
उब्बुनीटिपै नोकहंसा **॥ दि ॥**

अनुवुन कमल विहारमे नेलवै
ओनरियुन्न दिदे ओकहंस
मनियेडि जीवुल मानस सरसुल
उनिकिनुन्नदिदे ओकहंस **॥ दि ॥**

पालुनीरु नेर्परचि पाललो
नोललाडेनिदे ओक हंस

पालुपडिन ई परमहंसमुल
ओलिनुन्नदिदे ओकहंस || दि ||

तडवि रोमरंध्रंबुल ग्रुड्ल
नुडुगक पोदिगीनोकहंस
कडुवेडुक वेंकटगिरिमीदट
नोडलु पेंचेनिदे ओक हंस || दि ||

परमात्मा-तत्त्व के बारे में विवरण दिया गया है। पुराणों में कहा गया है कि सृष्टि से पूर्व, विश्व पूरा जलमय था तथा शुद्ध सत्वमूर्ति के रूप में परमात्मा, उस पर विद्यमान थे। तदनंतर उन्होंने सृष्टि की रचना की। पानी में पहाडों की परिकल्पना की। सप्तगिरि शिखरों पर 'वेंकटगिरि नाथ' के रूप में इस धरा पर वे विराजमान हो गये।

'हंस' को श्रीनिवास की संज्ञा दी गयी है, जो परिशुद्धता तथा वैराग्य का प्रतीक है। परमात्मा के भी ये ही लक्षण हैं। हंस 'कमलवन' में विहार करता है। कमल से ही क्रीडाविनोद करता है। इन मरालों को, मानस सरोवर ही मुख्याश्रय है। जीवों के मानस-सरोवरों में ही परमात्मा विहरते हैं। नीर तथा क्षीर के भेद को प्रकट करनेवाले हंस की तरह परमात्मा भी पाप तथा पुण्यों को अलग कर – 'पुण्य' में ही वास करते हैं। पाप भी परमात्मा की ही सृष्टि होते हुए भी, वह उन्हें अप्रिय है। परमात्मा तक पहुँचने का एक मात्र मार्ग, पुण्य ही है। उनके आश्रय में जानेवाले भक्तजन परमहंस हैं। अपने पंखों की आड में हंस अपनी संतति का सृजन करने की तरह परमात्मा अपने रोमकूपों से ब्रह्मांड की सृष्टि करते हैं तथा उसमें परिव्याप्त हो, उसे चलाते हैं।

* * *

४९

भक्ति कोलदि वाडे परमात्मुडु
भुक्ति मुक्ति ताने इच्चु परमात्मुडु || भक्ति ||

पट्टिनवारि चेबिड्ड परमात्मुडु
बट्टबयटि धनमु परमात्मुडु
पट्टपगटि वेलुगु परमात्मुडु
एट्ट एदुटनेवुन्नाडिदे परमात्मुडु ॥ भक्ति ॥

पच्चिपाललोनि वेन्न परमात्मुडु
बच्चेनवासि रूपु परमात्मुडु
बच्चुचेति ओरगल्लु परमात्मुडु
इच्च कोलदिवाडुपो ई परमात्मुडु ॥ भक्ति ॥

पलुकुललोनि तेट परमात्मुडु
फलियिंचु निंदरिकि परमात्मुडु
बलिमि श्री वेंकटाद्रि परमात्मुडु
एलमि जीवुल प्राणमी परमात्मुडु ॥ भक्ति ॥

परमात्मा को अत्यंत सुलभ तथा आश्रितों की तत्काल रक्षा करनेवाले कहते हुए, हमारे आस-पास ही सदा रहनेवाले उस करुणामय रूप में वर्णन हुआ है।

अन्नमाचार्य कह रहे हैं कि परमात्मा, इतने मयस्सर हैं कि जो भी हो, उनकी पुकार सुनकर उनके पास चले आते हैं। वे ऐसी निधि हैं, जो किसी भी प्रयास के बिना ही मिल जाती है बस, हाथ के अत्यंत निकट ही हैं। वे तो दिन की कांति की तरह अत्यंत स्पष्ट भी हैं, बिल्कुल हमारे सामने ही खडे हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है।

परमात्मा उस मक्खन की तरह है, जो दूध को उबाले बिना ही प्राप्त होती है। इसका अर्थ है – इतने छोटे प्रयत्न की भी आवश्यकता नहीं पडती है – भगवान को पाने में!! उनका विग्रह तो सहज-सुंदर है, न कि शिल्पकारों की निपुणता से बना! सोने की स्वच्छता को जिस तरह पारसवेदी

से जाना जाता है, इसी तरह भगवान उस पारसवेदी की तरह हैं, जिससे भक्त इस संसार के मूल्यों को जान लेता है।

परमात्मा तो शब्दों में छिपी तरलता की तरह हैं। अर्थों में परमार्थ समान हैं। अपनी शक्ति से, अपने आदर-सम्मान से, सकल जीव-राशि के प्राणों की रक्षा करते हैं। श्री वेंकटाद्रि पर विराजमान श्री वेंकटेश ही सवव्यापक परमात्मा हैं।

* * *

५०

वाडे वेंकटाद्रि मीद परदैवमु
पोडिमितो पोडचूपे पोडवैन दैवमु ।। वाडे ।।

वोक्कोक्क रोमकूपान नोगि ब्रह्मांड कोट्लु
पेक्कटिल्ल वेलुगोंदे पेनु दैवमु
पक्कननु तनलोनि पदुनालुगु लोकालु
तोक्कि पादानगोलचे दोड्ड दैवमु ।। वाडे ।।

वेदशास्त्रालु नुतिंचि वेसरिकानगलेनि
मोदपु पेक्कु गुणाल मूल दैवमु
पोरि देवतलनेल्ल पट्टिंच रक्षिंच
आदिकारणंबैन अजुगन्न दैवमु ।। वाडे ।।

सरुस शंखु चक्रालु सरिबट्टि असुरुल
तरगि पडवेसिन दंडि दयिवमू
सिरिपुरमुन निंचि श्रीवेंकटेशुडै
शरणागतुल गाचे सतमयिन दैवमु ।। वाडे ।।

श्री वेंकटेश की रूपमाधुरी को प्रस्तुत किया गया है। उनकी मूर्ति को देखते ही वे भाव-विभोर हो जाते हैं तथा वेदों, पुराणों में उद्घोषित

अनेकानेक विषयों का स्मरण उन्हें हो आता है। यह बडे ही विस्मय की बात है कि श्री वेंकटेश पर रची हुई हर एक रचना अन्नमाचार्य के भावों तथा विषय परिज्ञान की विस्तृति का विस्पष्ट उदाहरण ठहरती है।

वेंकटाद्रि पर स्थित अत्युन्नत स्वामी तथा अशेष वरदानों के दाता का वर्णन किया गया है।

हर एक रोम कूप में स्थित करोडों ब्रह्माण्डों से निकलती हुई कांति से अत्यंत शोभायमान है यह स्वामी! चतुर्दश भुवन इन्हीं में समाये हुए हैं। फिर से उन्हीं भुवनों को अपने कदमों से नापा है, इस लीलामानुष वेषधारी ने!

बहुगुणों से शोभित इस देवता की स्तुति अविश्रांत करते रहने पर भी, वेदों को इनके निज-रूप का आभास नहीं हुआ! देवताओं के जन्म तथा रक्षा के आदिकारक ये स्वामी काम-देव के पिताश्री हैं।

इन्होंने शंख तथा चक्रायुधों से दानवों को चकनाचूर किया। यहाँ श्री वेंकटेश बन, शरणागतों की रक्षा कर रहे हैं।

* * *

५१

भक्त सुलभुडनु परतंत्रुडु हरि
युक्ति साध्यमिदे योकरिकि गाडु ॥ भक्त ॥

निनुपगु लोकमुल निंडिन विष्णुडु
मनुजुड नालो मनिकि यय्ये
मुनुकोनि वेदमुल नुडिगिन मंत्रमु
कोन नालिकललो गुदुरै निलिचे ॥ भक्त ॥

येलमि देवतलनेलिन देवुडु
नलुगडनधमुनि ननु नेले

बलुपगु लक्ष्मीपतियगु श्री हरि
इल मा इंटनु इदिवो निलिचे ।। भक्त ।।

पोडवकु बोडवगु पुरुषोत्तमुडिदे
बुडि बुडि माचेत बूज गोने
विडुवकिदिवो श्रीवेंकटेश्वरुडु
बडिवायडु मा पालिट निलिचे ।। भक्त ।।

भगवान भक्त सुलभ हैं। स्वाधीन नहीं - पराधीन हैं। दृढ़ संकल्प तथा दीक्षा से प्राप्त होनेवाले होने पर भी वे किसी एक के ही नहीं हैं।

सकल लोकों में परिव्याप्त विष्णु – मुझ जैसे अल्प प्राणी में आवास कर रहे हैं। वेदों द्वारा उद्घोषित वह दिव्य मंत्र – मेरे जिह्वाग्र भाग पर टिक गया है। सभी देवी-देवताओं के शासक ने मुझ जैसे अधम को अपना बना लिया है। सभी संपदाओं की महारानी लक्ष्मीजी के भाग्वयवान पति, देखो! हमारे घर में विराजमान हैं। उत्कृष्ट से उत्कृष्ट परमोत्कृष्ट वे पुरुषोत्तम हमारे हाथों की नगण्य पूजा को स्वीकार रहे हैं। सदा अपृथक रहते हुए श्रीवेंकटेश हम पर करुणा बरसा रहे हैं।

* * *

५२

वेडुकोंदामा वेंकटगिरि वेंकटेश्वरुनि
आमटि मोक्कुलवाडे आदि देवुडे वाडु
तोमनि पल्लालवाडे दुरित दूरुडे ।। वेडु।।

वड्डिकासुल वाडे वनजनाभुडे पुट्ट
गोंड्डुरांड्रकु बिड्डल निच्चे गोविंदुडे ।। वेडु ।।

येलमि गोरिन वरालिच्चे देवुड्डु
अलमेल्मंगा श्री वेंकटाद्रि नाथुडे ।। वेडु ।।

श्री वेंकटेश से संबंधित दो विशेषाएँ वर्णित हैं।

श्री वेंकटेश से अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने की प्रार्थना करने के लिए कहा गया है। जब किसीको कोई भी विपदा आये, तो उनसे प्रार्थना कर लें, तो वे अवश्य अपने भक्त की मनोकामना पूरी करते हैं। तिरुमल स्वामी की इस भक्तवत्सलता के लिए भक्त अपनी कृतज्ञता को वस्तु, धन या किसी अन्य रूप में उनको समर्पित कर, तृप्त होते हैं। कारणवश अगर संकल्पित अवधि के अंदर इस कार्य को पूरा कर न सकें, तो स्वामी अपने भक्त से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में ब्याज सहित संकल्पित मनौती को पूरा कर ही लेंगे। श्रीवेंकटेश की एक और विशेषता यह है कि उन्हें हर दिन अपने भक्त 'कुरुवरतिनंबी' की याद में, अधकटे खपडे में नैवेद्य चढ़ाया जाता है। हर दिन नये खपडे को लाने के कारण थालियों को धोने की आवश्यकता नहीं पडती है।

इन दोनों विशेषताओं का उल्लेख इस गीत में है। विपदा के समय, भक्तों की मनोकामनाओं की पूर्ति कर फिर ब्याज सहित मनौती की प्रप्ति कर लेनेवाले स्वामी हैं श्री वेंकटेश। हर दिन नयी थालियों में नैवेद्य चढ़ाने के नियम को प्रस्तावित करते हुए कहते हैं कि श्री वेंकटेश बाँझा की झोली भी भर देते हैं। भक्त जो भी माँगते हैं, अलमेलमंगापति देते हैं तथा भक्त-कोटि पर करुणा की वर्षा करते हैं। मगर स्वयं आदर से अधकटे खपडे में नैवेद्य से ही तृप्त हैं।

* * *

५३

कंटिनिदे यर्थमु घनशास्त्रमुलदव्वि
नंटुनदिकंटेनु नाणेमेंदूलेदु ॥ कंटि ॥

मेटिवैराग्यमुकंटे मिक्किलि लाभमु लेदु
गाटपु विज्ञानमुकंटे सुखमुलेदु
मीटैन गुरुवुंकटे मीद रक्षकुड्डु लेड्डु
बाट संसारमुकंटे पगलेदु ॥ कंटि ॥

परपीड सेयुकंटे पापमु मरेंदु लेदु
परोपकारमुकंटे बहु पुण्यमु लेदु
निरत शांतमुकंटे निजधर्ममेंदु लेदु
हरिदासुडौकंटे नट गति लेदु ॥ कंटि ॥

कर्मसंगमु मानुकंटे देजमुलेदु
अर्मिलि गोरिक मानेयंतकंटे बुद्धिलेदु
धर्मपु श्री वेंकटेशु दगिलि शरणुचोच्चि
निर्मलाननुंडुकंटे निश्चयमुलेदु ॥ कंटि ॥

जीवन का अर्थ प्रकटित किया गया है। अनेकानेक शास्त्रों का मंथन कर, जिन मूल्यों को ढूँढ़ निकाला हूँ, इनसे बढ़कर मूल्यवान विषय कहीं नहीं मिलेंगे।

वैराग्य से बढ़कर महान् लाभ, गहरे विज्ञान से बढ़कर सुख तथा उत्तमोत्तम गुरु से बडे रक्षक हमें मिलेंगे ही नहीं। हमें सदा सर्वदा याद रखना है कि इस संसार से बडा ईर्ष्यालु कहीं नहीं होगा।

पर पीडा से बडा पाप, परोपकार से बडा पुण्य, शांत स्वभाव से बडा धर्म नहीं है। हरि के दास बनंने के सिवा और कोई चारा ही नहीं है – इस संसार से बचने का।

कर्म से बंधन तोडने से बडा तेज, वांछाओं को वश में रखने से बडी मेधा तथा श्री वेंकटेश की शरण में जाकर निर्मल जीवन बिताने से बढ़कर कोई निष्कर्ष और नहीं है।

* * *

५४

नदुलोल्लवु ना स्नानमु कड्डु
सदरमु नाकी स्नानमु ॥ नदु ॥

इरुवंकल नी येचिन मुद्रलु
धरियिंचुटे ना स्नानमु

धरपै नी निजदासुल दासुल
चरणधूलि ना स्नानमु ॥ नदु ॥

तलपुलोन निनु दलचिन वारल
दलचुटे ना स्नानमु
वलनुग निनुगनुवारल श्रीपाद
जलमुले ना स्नानमु ॥ नदु ॥

परमभागवत पादांबुजमुल
रुशानमे ना स्नानमु
तिरुवेंक्टगिरि देव नी कथा
स्मरणमे ना स्नानमु ॥ नदु ॥

स्वच्छ स्नान के लक्षण वर्णित हैं।

मात्र नदी में डुबकियाँ लेना – स्नान नहीं है। तुम्हारी मुद्राओं को दोनों भुजाओं पर धरना ही स्नान है। तुम्हारे निज दासों की पावन चरण-धूलि का स्पर्श ही स्नान है। सदा तुम्हारे ही ध्यान में रहनेवालों का स्मरण करना ही स्नान है। अपनी भक्ति के माध्यम से ही, तुम्हें देख पाने वालों के चरण जल को पाना ही मेरा स्नान है। हे मेरे स्वामी! परम भागवतों के चरण कमलों का दर्शन तथा तुम्हारी दिव्य गाथाओं का नित्य स्मरण ही स्नान मानता हूँ।

* * *

५५

आकटि वेलल अलपैन वेलल
तेरुव हरि नाममे दिक्कु मरि लेदु ॥ आकटि ॥

कोरमालि युन्नवेल कुलमुचेडिन वेल
जेरवडि योरुलचे जिक्किन वेल
नोरपैन हरिनाममोक्कटे गाक
मरचि तप्पिननैन मरि लेदु तेरगु ॥ आकटि ॥

आपद वच्चिन वेल नारडि बडिन वेल
पापपु वेल भयपडिन वेल
ओपिनंत हरिनाम मोक्कटे गतिगाक
मापु दाका बोरलिन मरिलेदु तेरगु ॥आकटि॥

संकेल बेट्टिन वेल, चंपबनिचिन वेल
अंकिलिगा नप्पुलवारागिन वेल
वेंकटेशु नाममे विडिपिंच गतिगाक
मंकुबुद्धि बोदलिन मरिलेदु तेरगु ॥आकलि॥

एक बार 'पदकवितापितामह' की उपाधि से सुविख्यात अन्नमाचार्य से राजा नरसिंहराय अनुरोध करते हैं कि श्री वेंकटेश की प्रस्तुति में जिस तरह श्रृंगार भरी रचनाएँ वे कर रहे हैं, उसी तरह की रचना मेरे बारे में कीजिए।' अन्नमाचार्य, राजा की इस कांक्षा को नकारते हैं और कहते हैं कि 'मैं भगवान तिरुमलगिरीश के सिवा अन्य किसी मानव मात्र की प्रस्तुति में रचना नहीं करूँगा।' 'राजा करे तो न्याय' लोकोक्ति के अनुसार, नरसिंहराय उन्हें कारागार में बाँधकर, 'मूरुरायरगंड' नामक बंधन डालते हैं। उस संदर्भ में 'श्री हरि नामस्मरण' को ही सभी विपदाओं में एक मात्र आधार कहते हुए अन्नमाचार्य द्वारा गाया गया यह गीत अति प्रसिद्ध है। सारांश इस प्रकार है –'जीवन के सभी संदर्भों में – मात्र हरि नाम के अन्य कोई आधार की आवश्यकता मुझे नहीं है। अन्नार्त को, जीवन से थकी वेदना में सही, 'हरिनाम' ही काफी है। निरर्थक स्थिति में, बंधुजनों के दूर हो जाने की स्थिति में, दूसरों से विचार-विमर्श किये जाने के समय में, विपदाओं में, भयपीडित दशा में, जितना हो सके, उतना हरि का स्मरण करना ही, अनगिनत बल देता है। कारागार में बंधे हों या 'मरण-दंड' की आज्ञा हुई हो, ऋणदाता पीछे पडे हों– सभी संदर्भों में 'हरिनाम' के सिवा अन्य आधार ही नहीं है।

कहा जाता है कि इस गीत को गाते ही अन्नमाचार्य के बंधन अपने आप टूट गये और वे स्वतंत्र हो गये थे।

* * *

५६

सामान्यमा पूर्व संग्रहंबगु फलमु ॥ सा ॥

नेममुन पेन गोनिये नेड्डु नीवनक ॥ सा ॥

जगति प्राणुलकेल्ल संसार बंधंबु
तगुल बंधिंचु दुरितंपु गर्भमुन
मगुड मारुकुमारु मगुव नी युरमुपै
तेगि कट्टिरेव्वरो देवुंडवनक ॥ सा ॥

पनिलेक जीवुलनु भवसागरंबुलो
मुनुग लेवकजेयु मोहदोषमुन
पनिपूनि जलधिलो पंडबेट्टिरि निन्नु
वेनकेव्वरो मोदलि वेलुपनक ॥ सा ॥

उंडनीयक जीवनोपायमुन मम्मु
कोंडलनु गोबलदति गोनि त्रिप्पु फलमु
कोंडलनु नेलकोन्न कोनेटि पतिवनग
नुंडवलसेनु नीकु नोपलेननक ॥ स ॥

पूर्व कर्मों का फल किसीको भी भोगना ही पडता है, आखिर हे वेंकटेश! तुम्हें भी! (व्याज स्तुति।)

पुराकृत कर्मों का फल किसी तरह छोडता नहीं है। जगत् के सभी प्राणियों को तुमने संसार रूपी बंधनों में बाँधा, तो क्या हुआ? किसीने तुम्हारे परमात्मा-तत्त्व को भी अनदेखा करते हुए, लक्ष्मी देवी को तुम्हारी पत्नी बनाकर तुम्हें भी सांसारिक बंधनों में बाँध दिया। तो क्या हुआ? तुम्हें भी अपने भक्तों की तरह इन सभी बंधनों का फल भोगना ही पड रहा है न?

भवसागर में डूबे हुए अपने भक्तों को उभरते हुए देखकर, तुम लीला-विनोद में आनंद लेते थे। जनन-मरण के चक्र में फँसकर बाधाओं का सामना करते रहे किसी अततायी ने, तुम्हारे दिव्यत्व को भी अनदेखा करते हुए क्षीरसागर के बीच लिटा दिया।

हे वेंकटेश! हमें तो तुमने इतने कष्ट दिये कि जीवन-यापन के लिए पहाडों, जंगलों में फिरना पड रहा है! इसका फल तुम्हें भी भोगना पड रहा है, दैखो! 'पुष्करिणी स्वामी' के नाम पर इन पर्वतों पर, शक्ति हो या न हो, गृहस्थी को चलाना पडा है न? हे लक्ष्मीधर! श्री वेंकटगिरीश! 'करनी-भरनी' का सूत्र तुम्हें भी नहीं छोडा है न?

* * *

५७

भावमुलोना बाह्यमुनंदुनु
गोविंद गोविंद यनि कोलुववो मनसा ॥ भाव ॥

हरियवतारमुलेयखिल देवतलु
हरिलोनिवे ब्रह्मांडमुलु
हरिनाममुले अन्निमंत्रमुलु
हरि हरि हरि हरि यनवो मनसा ॥ भाव ॥

विष्णुनि महिमले विहित कर्ममुलु
विष्णुनि पोगडेडि वेदंबुलु
विष्णुंडोक्कडे विश्वांतरात्मुडु
विष्णुवु विष्णुवनि वेदकवो मनसा ॥ भाव ॥

अच्युतुडितडे आदियुनंत्यमु
अच्युतुडे असुरांतकुडु
अच्युतुडु श्रीवेंकटाद्रिमीद निदे
अच्युत अच्युत शरणनवो मनसा ॥ भाव ॥

हे मन! त्रिकरणों को एकत्रित कर उस अच्युत का स्मरण करो।

मन अंतरंग है तथा वाक् बहिरंग है! पहला भाव है, तो दूसरा बाह्य है। मन, वाक् तथा कर्म – इन तीनों का एक साथ होना ही त्रिकरण-शुद्धि है। हे मन! तू इसका ध्यान रख!

हरि का स्मरण ही सकल पापों का हरण है। अखिल देवतासमूह हरि के अवतार हैं। ये सारे ब्रह्मांड, उस दामोदर के उदर में रहते हैं। हरि की नामावली ही सकल मंत्रों का सार है। विष्णु, सारे विश्व में परिव्याप्त हैं। विहित कर्म सभी विष्णु की महिमा का वर्णन ही करते हैं। वेद सभी, विष्णु का कीर्तिगान करते हैं। सारे विश्व में, विष्णु का रूप ही भरा हुआ है।

अच्युत, च्युत रहित हैं। आदि तथा अंत में भी स्थिर हैं वे! असुरों का अंत इन्होंने ही किया था। श्री वेंकटगिरि शिखरों में विराजमान उस अच्युत की शरण में जाओ!!

* * *

५८

ना तप्पु लोगोनवे नन्नु गाववे देव
चेतलिन्नी जेसि निन्नु जेरि शरणंटिनि ।। ना ।।

अंदरिलो अंतर्यामिवै नीवुंडगानु
इंदरिबनुलुगोंटि निन्नाल्लुवु
संदडिंचि इन्निटा नी चैतन्यमै युंडगानु
वंदुलेक ने गोन्नि वाहनालेक्कितिनि ।। ।। ना ।।

लोकपरिपूर्णुडवै लोना वेलिनुंडगानु
चेकोनि पूवुलु पंड्लु चिदिमितिवि
कैकोनि यीमायलु नीकल्पितमैयुंडगानु
चौकलेक नेवेरे संकल्पिंचितिनि ।। ना ।।

येक्कडचूचिन नीवे येलिकवै युंडगानु
इक्कडा दोत्तुलबंट्ल नेलिति नेनु
चक्कनि श्रीवेंकटेश सर्वापराधि नेनु
मोक्किति ननु रक्षिंचु मुंदेरुग नेनु ॥ ना ॥

अन्नमाचार्य के हृदय की तीव्र वेदना, पछतावे के रूप में दर्शन देती है।

मेरे दोषों को गिनो मत हे स्वामी! गलतियों को कर देने के बाद, तेरी शरण में आया हूँ – मेरी क्षमा करो।

मेरा पहला अवगुण यह है कि सभी प्राणियों में, अंतर्यामी की तरह जब तुम आवास कर रहे हो, फिर भी उन प्रणियों से मैंने सेवा ली है। कुछ प्राणियों पर मैं सवार भी हो गया – अनजाने में कि तुम्हारा चैतन्य सभी प्राणियों में समाया हुआ है। सभी वस्तुओं के अंदर-बाहर तुम ही हों। लेकिन मैंने मूरख फूलों-फलों को अपनी इच्छा के अनुसार रौंद दिया। यह जगत् जो तुम्हारी ही माया से भरा हुआ है, तुम्हारी इच्छा के ही अनुसार चलती भी है न। इस नियति को भी मैं, अपने तरीके से चलाने का साहस करता रहा। सारे भुवन के अधिकारी, तुम्हारे होते हुए, मैं मूरख ने अधिकार जमाना चाहा। इन सभी अपराधों को करने के बाद, मुझे ज्ञात हुआ कि तुम इस पूरे ब्रह्माण्ड के स्वामी हो। आखिरकार, अब मैं क्षमा-प्रार्थी हूँ। हे तिरुमलेश! मेरे अवगुण चित न धरो।

* * *

५९

आटवाडि गूडितौरा
आटवारिगूडि अन्निचोट्ल बोम्म
लाटलाडिंच नधिकुंडवैतिवि ॥ आट ॥

गुरुतरमगु पेद्द कोट्टामुलोपल
तिरुमैन पेनुमाय तेरगट्टि
अरयनज्ञानमुलवि यड्डमुगजेसि
परग सुज्ञानदीपमुलु मुट्टिंचि ॥ आट ॥

तोलुबोम्मल दोरकोनि गडियिंचि
गालिचेत वानि गदलिंचि
तूलेटि रसमुलु तोम्मिदि गडियिंचि
नालुगु मुखमुल नलुवुन नाडिंच ॥ आट ॥

निन्ने मेत्तुरु गानि नीकेमि नीलेरू
मन्निंचु दातलु मरिलेरु
येन्नग दिरुवेंकटेश्वर नीदासु
लुन्नतुलै निन्नु नुब्बिंचि पोगडग ॥ आट ॥

छाया-पुत्तल जिसे तेलुगु में 'तोलु-बोम्मलाट' कहते हैं, आंध्रप्रांत की बहु प्राचीन लोक-नाट्य है, जिसमें भैंस जैसे जानवरें की चमडी से बनी पुतलियों को रंगों से सजाकर, दिया की रोशनी में पर्दे के पीछे से कथानुसार गीत व व्याख्यान के साथ अत्यंत आकर्षक रीति में नचाया जाता है। करीब आठ सौ सालों का इतिहास रखनेवाली यह लोक-कला अन्नमाचार्य के दिनों में भी निस्संदेह प्रचलित थी। पन्द्रहवीं सदी के गीतकार अन्नमाचार्य भी इस कला से आकर्षित हुए होंगे, जैसे आज के लोग हो रहे हैं।

हर दिन, श्री वेंकटपति पर एक गीत रचने के अपने नियमानुसार जब वे रचना करते उद्यत हुए होंगे, तो उनके मनोपटल पर इस लोक-नाट्य का चित्र आ खडा हुआ होगा। इसी का फल होगा – यह गीत!

एक छाया-पुत्तल कलाकार के रूप में इस गीत में तिरुमलेश – हमारे सामने आते हैं। अन्नमाचार्य कहते हैं – हे स्वामी! हर जगह पुत्तलों को अच्छा नचा रहे हो। एक बडे कोष्ठागार में, अज्ञान रूपी लकडियों के

आधार पर माया रूपी परदा डालते हो। हे स्वामी! सुज्ञान रूपी दीपों की कांति में पुतलियों को चलाने की कला में निपुण हो गये हो ।

चमडे की पुतलियों को बनाते हो। हवा से उन्हें चलाते हो। नवरस उनमें भरकर, चार मुखोंवाले ब्रह्मा के द्वारा नचा रहे हौ। वाह! क्या तेरी चतुराई।

यहाँ के सभी प्राणी, तेरी प्रशंसा करते ही हैं। लेकिन तुम्हें कुछ उपहार वे नहीं दे सकते हैं। (उनके पास इतनी संपत्ति नहीं है न!) तुम्हारी इस निपुणता को देखकर वे तेरी दुहाई तो हर पल करते ही रहते हैं।

* * *

६०

पट्टिन चोने वेदकि भाविंचवले गानि
गट्टिगा नंतर्यामि करुणिंचुनु ।। पट्टि ।।

इंटिलोनि चीकटे इट्टे तप्पक चूचिते
वेंटने कोंतवडिकि वेलुगिच्चुनु
अंटि कानरानि यातुम तप्पक चूचु
कोंटे तन यातुमयु गोब्बुन कान्पिंचुनु ।। पट्टि ।।

मिंचि कठिनपु राति मीद गडव वेट्टिते
अंचेल दोन कुदुरैनयट्टु
पोंचि हरिनाममे येपोद्दु नालिक तुदनु
येंचि तलच तलच निरवौ सुज्ञानमु ।। पट्टि ।।

ओक्कोक्क यडुगे मुंदरवेट्टिते
येक्कुवै कोंडैना नेक्कु गोनकु
इक्कुव श्रीवेंकटेशु निट्टु दिनदिनमुनु
पक्कन गोलिचिते ब्रह्म पट्टमेक्कुनु ।। पट्टि ।।

भगवान को पाना अत्यंत सरल तथा सहज है । हम जहाँ हैं, वहीं पर खोजकर मनन करेंगे, तो वे हम पर कृपा अवश्य बरसायेंगे।

अगर घर में दिया बुझ जाय, तो उसी अंधकार में कुछ समय तक एकटक देखते रहने से, कुछ समय के बाद, उसी अंधकार में, वस्तु भी कुछ हद तक दिखायी देती हैं न? इसी तरह, हमारी आत्मा में ही छिपे हुए अंतर्यामी का ध्यान निरंतर करते रहने से, उनका दर्शन हमें अवश्य होगा।

घडे को हर दिन किसी भी कठिन-शिला पर रखते जाइये। पहले दिन लगता है - घडा कहीं लुठक जाय, तो पानी पूरा नीचे गिर जायेगा न। लेकिन क्रमशः इसी तरह, इसी स्थान पर घडे को रखते जायें, तो कुछ दिनों बाद उसी जगह पर घडे को रखने मात्र तक एक 'आधार-कुण्ड' सा बन जाता है न! इसी तरह जिह्वा पर हरि का नाम हर दिन हम लेते रहेंगे, तो हम सुज्ञानी अवश्य बन जाते हैं।

कहीं दूर-प्रांत के लिए जाना चाहें, तो पहले हम सोच में पड जाते हैं कि इतना दूर चलेंगे कैसे। लेकिन एक-एक कदम बढ़ाते चलेंगे, तो महान पर्वत भी हमारे दृढ़ संकल्प के आगे छोटे हो जाते हैं न?

इसी तरह हर दिन, प्रेमपूर्वक पूजा करते रहें, तो श्री वेंकटेश की कृपा से हमें ब्रह्म-पद भी मिल जायेगा।

* * *

६१

अटुवंटि वाडुवो हरिदासुडु
अटमटालु विडिचिनातडे सुखि ॥ अटु ॥

तिट्टेटि माटलुनु दीविंचे माटलुनु
अट्टे सरेनि ततिचिनातडे सुखि
पट्टि चंपेवेलनु पट्टमु गट्टे वेल
अट्टु निट्टु चलिंचनियातडे सुखि ॥ अटु ॥

चेरि पंचदारिडिन जेदु देच्चि पेट्टिनानु
आरगिंचि तनिवोंदे यतडे सुखि
तेरकांड्ल जूचिन तेगरानि चुट्टमुल
नारय सरिगा जूचे यातडे सुखि ॥ अटु ॥

पोंदि पुण्यमु वच्चिन पोरिबापमु वच्चिन
नंदलि फलमोल्लनि यातडे सुखि
विंदुगा श्री वेंकटाद्रि विभुनि दासुल जेरि
अंदरानि पदमंदि नातडे सुखि ॥ अटु ॥

हरिदास के यथार्थ लक्षणों को बताकर उसे ही 'सुखी' कह गया है।

सुखी वही होता है, जो निष्फल विचारों को त्याग देता है। निंदा और प्रशंसा को एक ही तरह वह स्वीकारता है। प्राणों का हरण हो या राज-मुकुट धारण हो, दोनों समयों में विचलित न रहनेवाला ही सुखी है।

शर्करा जैसा मधुर पदार्थ हो या कोई और कड़ुवा पदार्थ – दोनों को एक ही भावना से खाकर संतुष्ट होनेवाला ही सुखी है। अपरिचित व्यक्तियों तथा निजी बंधुओं से, एक समान व्यवहार करनेवाला ही सुखी है।

पुण्य हो या पाप हो, दोनों के फलों को स्वीकृत न करनेवाला ही सच्चा सुखी है। श्री वेंकटाद्रीश के सेवकों की संगति में सुख का अनुभव कर, उस स्थिति को ही सर्वश्रेष्ठ माननेवाला मात्र ही सुखी है एवं वही यथार्थ में हरिदास है।

* * *

६२

इट्टि जीवुलकिंक नेदि वाटि
दट्टमै देवुड नीवे दयजूतु गाका ॥ इट्टि ॥

तन जन्म विधुलनु दलचु नोक्कोक वेल
नोनर मरचु नट्टे नोक्कोक वेल

विनु बुराण कथलु विवरिंचि योकवेल
पेनचि संदेहमुले पेंचु नोकवेल ॥ इट्टि ॥

विसिगि संसारमंदु विरतुडौनोकवेल
वोसगि यंदे मत्तुडौ नोकवेल
पसिगोनि इंद्रियालबंटै वुंडु नोकवेल
मुसिपितो दैवानकु मोक्कुनोक्कवेल ॥ इट्टि ॥

कोरि तपमुलु चेसि गुणियौ तानोकवेल
ऊरके अलसियुंडु नोक्कवेल
ई रीति श्री वेंकटेश येदलो नीवुंडगानु
बीरान नीके मोरबेट्टु नोकवेल ॥ इट्टि ॥

विविध समस्याओं से, विविध रीतियों से भगवान से दूर होते जा रहे, संसार के अज्ञानी के बारे में प्रस्तुत किया गया है।

कभी अपने जीवन कर्मों से व्यस्त हो जाते हैं। पता नहीं, उन्हीं कर्मों को झट कैसे भूल जाते हैं। पुराण-गाथाओं को बडी ही तत्परता से कभी सुनते हैं, तो कभी विविध भ्रांतियों के जाल में ऐसे ही फँस जाते हैं।

पारिवारिक बंधनों से कभी विरक्त हो जाते हैं, तो कभी उन्हीं में खो जाते हैं। शारीरिक सुखों की तरफ आकर्षित हो, इन्द्रियों के सेवक बन जाते हैं, तो कभी थकने पर भगवान के सामने माथा टेकते हैं।

कभी पश्चात्ताप, एकाग्रता से गुणी बन जाते हैं, तो कभी निराश हो, स्फूर्तिहीन हो जाते हैं। हे वेंकटरमण! अंतर्यामी के रूप में जीवों के हृदयों में सदा तुम्हारे रहते हुए भी, तुम्हें बाहर की शक्ति मानकर तुम्हारी प्रार्थना बडी ही नीरसता से करनेवाले हम मानवों को तुम्हारी दया वृष्टि अविरल बरसने तक, स्थिरता कहाँ से मिलेगी?

* * *

६३

अन्निटिकिनि निदि परमौषधमु
वेन्नुति नाममे विमलौषधमु ॥ अन्निट्टि ॥

चित्तशांतिकिनि श्रीपति नाममे
दृत्तिन निज दिव्यौषधमु
मोत्तपु बंध विमोचनंबुनकु
चित्तजगुरुडे सिद्धौषधमु ॥ अन्निटि ॥

परिपरिविधमुल भवरोगमुलकु
हरि पाद जलमे औषधमु
दुरित कर्ममुल दोलगिंचुटकुनु
मुरहरूपूजे मुख्यौषधमु ॥ अन्निटि ॥

इलनिहपरमुल निंदिराविभुनि
नलरि भजिंपुटे यौषधमु
कलिगिन श्रीवेंकटपति शरणमे
निलिचिन माकिदि नित्यौषधमु ॥ अन्निटि ॥

भगवान वेंकटेश के नाम की महत्ता का वर्णन किया गया है।

श्रीविष्णु का नाम ही सर्वोत्तम औषधि है। मन की शांति के लिए श्रीपति का दिव्य नाम ही सही दिव्य औषधि है। सभी बंधनों से मुक्ति के लिए कामदेव के जनक (विष्णु) का नाम ही उपचार है।

विविध सांसारिक रोगों की चिकित्सा होती है – श्री हरि के चरण-जल से। बुरे कर्मों से दूर हटने का एक मात्र उपाय है – हरि की पूजा ।

इस धरा पर वर्तमान तथा भविष्य में भी 'इंदिरापति' का सहर्ष कीर्तिगान तथा श्री वेंकटपति का आश्रय मात्र ही सार्वकालिक औषधि है। इसमें कोई संदेह नहीं।

* * *

६४

ईतनिमरचियुंटि मिन्नाल्लनु
ईतलनेडेच्चरिंचे नीतडे पो विष्णुडु ॥ ईतनि ॥

तल्लियै पोषिंचु तंड्रियै रक्षिंचु
उल्लपु बंधुवुडै वोडलरयु
मेल्लन दातै इच्चु मेलुतयै यादरिंचु
येल्लविध बंधुवुडु ईतडेपो विष्णुडु ॥ ईतनि ॥

येलिकयै मन्निंचु निष्ठुडै बुद्धिचेप्पु
चालुमानिसियै यंचल दिरुगु
बालुडै मुद्दुचूपु प्राणमै लोननुंडु
ईलागुलबंधुडीतडेपो विष्णुडु ईतनि ॥

देवुडै पूजगोनु द्रिष्टि गोचरमै
श्री वेंकटाद्रि मीद सिरूलोसगु
तावै येडमिच्चु, तलपै फलमिच्चु
ईवल नावल बंधु डीतडे पो विष्णुडु ॥ ईतनि ॥

इतने सारे दिन हम इन्हें भूल ही चुके थे, लेकिन आज स्वयं विष्णु ने हमें सतर्क किया है। श्री वेंकटेश ही सर्वस्व हैं।

माता बन वे हमारा पोषण करते हैं। पिता के रूप में हमारी रक्षा करते हैं। अत्यंत निजी बंधु के रूप में मन हर लेते हैं। दाता के रूप में शीतल करुणा बरसाते हैं। परम शांत देवी बन, देखभाल करते हैं। किसी भी दृष्टि से देखें, वे ही हमारे परम निकट बंधु हैं।

राजा की तरह क्षमा करते हैं। मित्र की तरह सलाह देते हैं। भले मानस बन, साथ देते हैं। छोटे शिशु की तरह प्यार जताते हैं। जीव शक्ति बन, शरीर में रहते हैं। इस तरह मात्र वे ही हमारे निकट-बंधु हैं।

श्री वेंकटाद्रि पर देवता के रूप में दर्शन देकर, पूजा स्वीकारते हैं। वैभव विभव हमें प्रदान करते हैं। आवास बन आश्रय देते हैं। सद्भावना के रूप में, सत्फल भी देते हैं। यहाँ-वहाँ हर प्रदेश में, हमारे एक मात्र बंधु विष्णु ही हैं।

* * *

६५

आदि मूलमे माकु अंग रक्ष
श्रीदेवुडे माकु जीवरक्ष ॥ आदि ॥

भूमि देवि पतियैन पुरुषोत्तमुडे माकु
भूमिपै नेडनुंडिन भूमि रक्ष
अवनि जलधिशायियैन देवुडे माकु
सामीप्यमंदुन्न जल रद ॥ आदि ॥

म्रोयुचु नग्नि लो यज्ञमूर्तियैन देवुडु
आयमुलु ताककुंड अग्निरक्ष
वायुसुतुनेलिनट्टि वनजनाभुडे माकु
वायुवंदु कंदकुंड वायु रक्ष ॥ आदि ॥

पादमाकाशमुनकु पारजाचे विष्णुवे
गादिलियै माकु आकाश रक्ष
साधिंचि श्री वेंकटाद्रि सर्वेश्वरुडे माकु
सादरमु मीरिनट्टि सर्वरक्ष ॥ आदि ॥

भगवान वेंकटेश को पांचभौतिक तत्त्वों (पृथ्वी, आकाश, अग्नि, वायु तथा जल) की दृष्टि से 'महान रक्षक' बताया गया है। पांचभौतिक तत्त्वों से बने जीवों की रक्षा भी इन्हीं रूपों में स्वामी करते हैं।

'इस धरित्री पर जहाँ भी रहें, वे पुरुषोत्तम स्वामी, श्री देवी के प्राणेश, हमारी रक्षा करते हैं। जलधिशायी स्वामी ही हमारे जल-रक्षक हैं। वे सदा

हमारे समीप ही रहते हैं। अग्नि में यज्ञ-मूर्ति के रूप में रहनेवाले स्वामी, हमारे शरीरों को अग्नि से बचाते हैं। पवन-सुत हनुमान के वनज-नाभ स्वामी ही भीषण-वायु से हमारी रक्षा करते हैं। अपने चरण को नभोमंडल तक फैलानेवाले विष्णु ही संपूर्णतया हमारे आकाश-रक्षक हैं। श्री वेंकटाद्रि पर स्थित सर्वेश्वर ही सकल रीतियों से हमारे रक्षक हैं।

बच्चों को जब माँ नहाती है, तब वह पाँचभौतिक तत्त्वों का नाम लेकर रक्षा करने की कामना करती हुई मुट्ठी भर पानी को, बच्चे की चारों तरफ से गिराती है, ताकि इन दिशाओं से भी अपने लाडले को रक्षा मिले। श्री वेंकटेश ही सभी जीवों के रक्षक हैं।

* * *

६६

वैष्णवुलु गानिवारलेव्वरु लेरु
विष्णु प्रभावमी विश्वमंतयु गान ॥ वै ॥

अंतयु विष्णुमयंबट मरि, देव
तांतरमुलु गलवननेला?
भ्रांति बोंदि ई भावमु भाविंचि
नंतने पुण्युलवुट तप्पदु गान ॥ वै ॥

येव्वरिगोलिचिन नेमिगोरत, मरि
येव्वरि दलचिन नेमि?
अव्वलिव्वल श्री हरि रूपु गानिवा
रेव्वरु लेरनि येरुक दोचिन जालु ॥ वै ॥

अति चंचलंबैन यातुम गलिगिंचु
कतमुन बहु चित्तगतुलै
इतरुल गोलिचिन येडयक यनाथ
पति तिरुवेंकटपति चेकोनुगाक ॥ वै

सारे विश्व में विष्णु का प्रभाव फैला हुआ पाकर आनंद-विभोर हो गये हैं।

'सर्वं विष्णुमयं जगत्' – यह जगत विष्णु से भरा हुआ है। तो फिर क्यों कहें कि यह देवता सर्वोत्कृष्ट है। इस देवता का सामर्थ्य बस, यही है। इस तरह देवताओं के बीच तर-तम एवं उच्च-नीच का भेद नहीं मानना चाहिए। भगवत्तत्त्व का जिस रूप में भी पूजा करो, बस यह निश्चय है कि परमपद उसे अवश्य प्राप्त हो जायेगा। किसी भी रूप में पूजा करो, किसीका भी ध्यान करो, इतना तो ध्यान रहे कि हरि से अन्य देव कोई भी नहीं है। यह आत्मा तो अति चंचल है। उसके आदेशानुसार अन्य किसी भी देवता की आराधना करो, वेंकटाद्रि पर स्थित श्री वेंकटेश ही बिना किसी भेद-भाव के हमारी रक्षा तथा हमारा उद्धार करते हैं। यह सत्य है।

* * *

६७

वाडे वाडे अल्लरिवाडदिवो
नाडु नाडु यमुना नदिलोन, ॥ वाडे वाडे ॥

कांतलु वलयपु कंकण रवमुल
नंतंत गोलाट माडगनु
चेंतल नडुमनु श्री रमणुडमरे
सरसपु जुक्कललो चंद्रुनिवलेनु वाडे वाडे ॥

मगुवलु मुखपद्ममुलु दिरिगि रा
नगपडि कोलाटमाडगनु
निगिडी नडुमनदे नीलवर्णुडु
पगटुतो गमल बंधुडिवलेनु ॥ वाडे वाडे ॥

गोपिकलीरीति गोलाटमाडग
एपुन श्री वेंकटेश्वरुडु

वोवेल नलमेल्मंगनु उरमुल निडुकोनि
दीविंचे मणुललो तेजमु वलेनु ॥ वाडे वाडे ॥

यमुना नदी के तीरों पर गोपियों के नृत्य का मनोहर वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

गोपांगनाओं के 'कोलाट' नृत्य में उनके हाथों के कंगनों से मधुर ध्वनि निकल रही है। उन रमणियों के बीच, तारों के बीच चंद्रमा की तरह, कृष्ण शोभायमान हैं। मुग्धमनोहर रीति में नृत्य करती रहीं उन कमल वदनाओं के बीच, वह नीलवर्ण, कमल-बांधव सूर्य की तरह चमक रहे हैं। गोपांगनाओं के इस 'कोलाट' नृत्य से, 'अलमेल्मंगा' को अपने हृदय में स्थिर निवास किये हुए स्वामी, दिव्य मणि समान कांति से शोभित श्रीवेंकटेश उन्हें आशीर्वाद दे रहे हैं।

* * *

६८

भूमिलोन गोत्तलाये बुत्रोत्सवमिदिवो
नेमपु कृष्णजयंति नेडेयम्मा ॥ भूमि ॥

काविरि ब्रह्मांडमु कडुपुलोनुन्नवानि
देवकि गर्भमुन नद्दिर मोचेनु
देवतलेल्ल वेदकि तेलिसि काननिवानि
ईवल देवदेवुडु येट्टु गनेनम्मा ॥ भूमि ॥

पोडवुकु बोडवैन पुरुषोत्तमुडु नेडु
अडरि तोट्टेल बालुडायनम्मा
उडुगक यज्ञभारमोगि नारगिंचेवाडु
कोडुकै तल्ली चन्नुगुडिचीनम्मा ॥ भूमि ॥

पालजलधियल्लुंडै पायकुंडे ईतनिकि
पालपुट्लपंडुग भातायनटे

अलरि श्रीवेंकटाद्रि नाटलाडने मरगि
पेलरियै कड्डु पेच्चुवेरिगेनम्मा ।। **भूमि** ।।

साक्षात् जगदीश आखिर एक बालक बन, बाल्यावस्था का आनंद लूट रहा है। (श्रीकृष्ण का जन्मोत्सव)।

जिस स्वामी के पेट में यह समस्त ब्रह्माण्ड है, विस्मय की बात यही है कि देवकी ने उस स्वामी को अपने गर्भ में शिशु के रूप में ढ़ोया। युगयुगों में ढूँढ़ने पर भी देवताओं को जिसका पता न मिला, उसे इस वासुदेव ने झट कैसे पा लिया?

वह महदाकार पुरुषोत्तम आज पालने में बालक बन झूल रहा है। यज्ञ भागों का आस्वादन सदा करनेवाले स्वामी पुत्र बन यशोदा का स्तनपान कर रहे हैं।

क्षीर-सागर के जामाता होने के कारण कभी भी इस स्थान से वे दूर नहीं हटते हैं। फिर भी देखो, यहाँ दूध के घडों को फोडने के इस उत्सव से उन्हें कितना आकर्षण हो गया है। श्री वेंकटाद्रि पर क्रीडा-विनोदों में प्रसन्न इस बालक का बक-झक आजकल थोडा अधिक भी हो गया है।

* * *

६९

मुद्दुगारे यशोद मुंगिटि मुत्यमु वीडु
इद्दरानि महिमल देवकी सुतुडु ।। मुद्दुगारे ।।

अंतनिंत गोल्लेतल अरचेति माणिक्यमु
पंतमाडे कंसुनि पालि वज्रमु
कांतुल मूडु लोकाल गरुड पच्चबूस
चेंतल मालोनुन्न चिन्निकृष्णुडु ।। मुद्दुगारे ।।

रतिकेलि रुक्मिणिकि रंगुमोवि पगडमु
मिति गोवर्धनपु गोमेधिकमु

सतमौ शंखुचक्राल संदुल वैडूर्यमु
गतियै मम्मु गाचे कमलाक्षुडु ॥ मुद्दुगारे ॥

कालिंगुनि तललपैन गप्पिन पुष्यरागमु
एलेटि श्रीवेंकटाद्रि इंद्रनीलमु
पाल जलनिधिलोन बायनि दिव्य रत्नमु
बालुनिवले दिरिगे पद्मनाभुडु ॥ मुद्दुगारे ॥

देवकीनंदन श्रीकृष्ण को नवरत्नों के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

नटखट बालक कन्हैय्या को, यशोदा मैय्या के आंगन का मौक्तिक संबोधित करते हुए वे कहते हैं कि अत्यंत महिमावान यह माखन-चोर, गोप भामिनियों का 'अनायास भक्ति योग' रूपी 'मानिक' है। शत्रु कंस के लिए वज्र, चमकती हुई कांति के कारण तीनों लोकों के लिए मरकत ही है। 'श्रृंगार केली के समय रुक्मिणी के होंठों के रंग में सम्मिलित 'प्रवाल' तथा गोवर्धन पर्वत पर 'गोमेधिक' की तरह कमलनयन (कृष्ण) उन्हें दिखायी देते हैं। वे शंख चक्रों के बीच प्रकाशमान 'वैढूर्य' भी हैं। कालिंदी (यमुना) नदी में सर्पराजा के सर पर अलंकृत पुष्यराग की तरह वेंकटाद्रि पर इंद्रनीलमणी की तरह, क्षीर जलधि में दिव्य रत्न की तरह श्रीवेंकटेश्वर उन्हें दर्शन देते हैं। दिव्य नवरत्नों की प्रभा से भासमान 'पद्मनाभ' बालक की तरह घूम रहे हैं।

* * *

७०

जो अच्युतानंद जो जो मुकुंदा
रावे परमानंद राम गोविंदा ॥ जो ॥

अंगजुनि गन्न मायन्न इटुरारा
बंगारुगिन्ने लो पालु पोसेरा
दोंग नीवनि सतुलु पोंगुचुन्नारा
मुंगिट नाडरा मोहनाकारा ॥ जो ॥

गोवर्धनंबेल्ल गोडुगुगा पट्टि
कावरम्मुननुन्न कंसु बडगोट्टि
नीवु मधुरापुरमु नेलजेपट्टि
ठीवितो नेलिन देवकीपट्टि ।। जो ।।

लिंगुगा ताल्लपाकन्नय्य चाला
श्रृंगार रचनगा जेप्पे नी जोला
संगतिग सकल संपदल नीवेल
मंगलमु तिरुपट्ल मदनगोपाल ।। जो ।।

तेलुगु लोग का यह बहुत चहेता गीत है। यह लोरी, हरेक तेलुगु माँ को कंठस्थ है। तेलुगु प्रांत का हर प्यारा बच्चा इस लोरी को सुनते ही बडा होता है तथा अपने बच्चों को भी इस गीत से सुलाता है।

बालकृष्ण को लोरी गाते हैं। हे नटखट नंदगोपाल! तू मनोकामनाओं का कारक है। (अंगज के पिता) स्वर्ण-पात्र (बरतन) में दूध तैयार है। आकर पी जाओ। क्या तुम्हारी पत्नियाँ तुम्हें चोर का नाम देकर सता रही है? (कोई बात नहीं) यहाँ आकर आँगन में खेलो।

गोवर्धन पर्वत को तुम छाते की तरह पकडे थे। घमंडी कंस का अंत करने के बाद, मधुरापुर का राज तुमने ही किया था। ताल्लपाक (अन्नमाचार्य का गाँव) का अन्नमाचार्य इस लोरी का रचनाकार है। तुम्हारे कीर्तिगान से सभी को सुख-संपदा मिलें।

* * *

७१

उय्याला बालुनूचेदरु कडु
नोय्य नोय्य नोय्यनुचुनु ।। उय्याला ।।

बालयव्वनुलु पसिडि उय्याल
बालुनिवद्द पाडेरु

लालि लालि लालेम्म लालि
लालि लालि लालनुचू ॥ उय्याला ॥

तम्मि रेकु कनुदम्मुल नव्वुल
पम्मु जूपुल पाडेरु
कोम्मलु मट्टेल गुनुकुल नडपुल
धिम्मि धिम्मि धिम्मि धिम्मनुचु ॥ उय्याला ॥

चल्लु जूपुल जवराड्रु
रेपल्ले बालुनि पाडेरू
बल्लिदु वेंकटपति जेरि यंदेलु
घल्लु घल्लु घल्लु घल्लुनुचु ॥ उय्याला ॥

झूले में बालकृष्ण को झुलाती हुई गोपांगनाओं का वर्णन किया गया है।

सोने के झूले में बालकृष्ण को झुलानेवाली गोपांगनाओं का सौंदर्य अनुपम है। लोरियाँ सुनाती हुईं बालकृष्ण को सुला रही गोपांगनाएँ – साक्षात् कामदेव के बाण-सी लग रही हैं। उनकी आँखें, विकसित कमल हैं। उनकी दृष्टि तो मन्मथ के पुष्प बाणों से भी तीक्ष्ण हैं। उनके चलने के ढ़ंग से पाँवों में अलंकृत बिछुओं से मधुर ध्वनि निकल रही है। उन्हीं से गीतों में लय सा आ गया है। वे शीतल दृष्टिवाली सुंदरांगनाएँ अपनी सुंदरता के लावण्य को बिखेरती हुई पद किंकिणियों के झंकार को जोडकर वेंकटपति को सुला रही हैं।

* * *

७२

पाल दोंग वच्चि पाडेरु तम
पालिटि दैवमनि ब्रह्मादुलु ॥पालदोंग ॥

रोल गट्टिंचुक पेद्द रोललुगा वापोवु
नालुनि मुंदर वच्चि पाडेरु
आलकिंचि विनुमनि अंबर भागमंदु
नालुसु दिक्कुलनुंडि नारदादुलु ॥ पालदोंग ॥

नोरूनिंडा जोळ्ळगारनूगि दूलिमेनितो
पारेटि बिड्डुनि वद्द पाडेरु
वेरु लेनि वेदमुलु वेंटवेंट जदुवुचु
जेरि जेरि इंतनंत शेषादुलु ॥ पालदोंग ॥

मुद्दुलु मोमुनगार मूलल मूलल दागे
बद्दुल बालुनि वद्द पाडेरु
अद्दिवो श्री तिरु वेंकटाद्रीशुडितनि
चद्दिकि वेडिकि वच्चि सनकादुलु ॥ पालदोंग ॥

माखनचोर कृष्ण कन्हैया के अवतार में भगवान विष्णु की बाललीलाओं को पुलकित मनों से देवी-देवताएँ, मुनि श्रेष्ठ तथा ब्रह्मादि देवताएँ देख रहे हैं।

ओखली से बंधकर रो रहे कन्हैया के सामने, मुकुलित हस्तों से नारदादि ऋषिवर स्तुति कर रहे हैं। मैल से लदे, नटखट बालकृष्ण के मुँह से लार निकल रही है। सचमुच बालक की तरह, मनोहर मुस्कान से खेल रहे उस लीला-मानुष के सामने आदिशेषादि भक्त-बृंद अपौरुषेय कहे जानेवाले वेदों का पाठ कर रहे हैं। बालकृष्ण को देखते ही मुँह चूमने को मन करता है। आँखमिचौनी करनेवाले उस नंदनंदन के अलौकिक सौंदर्य से आकृष्ट होकर उसकी सनकादि योगिपुंगव स्तुति कर रहे हैं।

ग्वालों के बीच, मासूम बच्चे की तरह कितने भी नाटक रचें, लेकिन देवी-देवताएँ तो कृष्णावतार में श्री वेंकटेश की लीलाओं को तो पहचान ही गये।

* * *

७३

तोल्लियुनु मर्राकु तोट्टलने यूगे गन
चेल्लुवडि नूगीनि श्रीरंग शिशुवु ॥ तोल्लि ॥

कलिकि कावेरि तरगल बाहु लतलने
तलगकिट्टु रंगमध्यपु तोट्टेलन्
पलुमारु तनुजूचि पाडगानूगीनि
चिरुपाल सेलवितो श्रीरंगशिशुवु ॥ तोल्लि ॥

अदिवो कमलजुनि तिरुवारधनंबनग
अदन कमलभवांडमनु तोट्टेलन्
उदधुलु तरंगमुलु नूचगा नूगीनि
चेदरनि सिरुलतोड श्रीरंग शिशुवु ॥ तोल्लि ॥

वेदमुले चेरुलै वेलयंग शेषुडे
पादुकोनु तोट्टेलै परगगानु
श्रीदेवितोगूडि श्रीवेंकटेशुडे
सेदतीरेडि वाडे श्रीरंग शिशुवु ॥ तोल्लि ॥

'श्रीरंगम्' श्रीवैष्णव धर्म में वर्णित अष्टोत्तरशत दिव्य क्षेत्रों में प्रमुख है। इस क्षेत्र के स्वामी 'श्रीरंगनाथ' हैं, जो श्रीवैष्णव आल्वारों के इष्ट देवता तथा तिरुमलेश की तरह 'स्वयंभू' भी माने जाते हैं। इस गीत से यह स्पष्ट हो रहा है कि अन्नमाचार्य ने भी इस स्वामी का दर्शन किया तथा श्री वेंकटेश की तरह इस क्षेत्र के स्वामी में भी 'मथुरानाथ' की छवि को देखा!

अनादि से वट पत्रों पर, शिशु की तरह झूलते रहे स्वामी, श्रीरंगम् में भी ठीक उसी तरह विद्यमान हैं।

कावेरी नदी की बाहुलताओं के बीच, श्रीरंगम् क्षेत्र के मध्य भाग में, पालने में वे झूल रहे हैं। श्रीरंगम् शिशु को देख-देखकर परवशता से कावेरी

नदी गीत गा रही है। उसकी परवशता को देखते हुए श्रीरंग शिशु पालने में हँस रहे हैं, तो उनके अधरों के दोनों तरफ से दूध की बूँदें टपक रही हैं। कितना सुंदर दृश्य है यह!

लगता है, ब्रह्म देवता, स्वामी का तिरु-आराधनम् (दैनंदिन पूजा) पालने में ही कर रहे हैं, जो कमलगर्भ की तरह दिखायी दे रहा है, जलनिधियाँ अपने तरंगों से बालक को झुला रही हैं। श्रीरंग शिशु उन तरंगों के वेग में भी अविचलित वैभवों के साथ झूल रहे हैं।

वेद ही उस पालने की रस्सी हैं। आदिशेष ही उस पालने का गर्भ है, जहाँ श्रीदेवी के साथ श्री वेंकटेश - श्री रंगशिशु के रूप में विश्राम ले रहे हैं।

* * *

७४

मोत्तकुरे अम्मलाल मुद्दुलाडु वीडे
मुत्तेमुवलेनुन्नाडु मुद्दुलाडु ॥ मोत्त ॥

चक्कनि यशोद तन्नु सलिगे तो मोत्तरागा
मोक्कबोयी काल्लकु मुद्दुलाडु
वेक्कसान रेपल्ले वेन्नलेल्ल मापुदाका
मुक्कुल वय्यगदिन्न मुद्दुलाडु ॥ मोत्त ॥

रुव्वेडि राल्ल दल्लि रोलतन्नुगट्टेनंट
मुव्वल गंटलतोडि मुद्दुलाडु
नव्वेडि चेक्कुलनिंडा नम्मिक बालुनिवले
मुव्वुरिलो नेक्कुडैन मुद्दुलाडु ॥ मोत्त ॥

वेलसंख्यल सतुल वेंटबेट्टुकोनि रागा
मूल जन्नुकुडिचीनि मुद्दुलाडु
मेलिमि वेंकटगिरि मीद नुन्नाडिदि वच्चि
मूलभूति तानैन मुद्दुलाडु ॥ मोत्त ॥

बालकृष्ण की चेष्टाओं का वर्णन मिलता है।

बालकृष्ण का रूप मोती की तरह अत्यंत आकर्षक है! अन्नामाचार्य बृंन्दावन की गोपांगनाओं से अपनी अभिन्नता का अनुभव कर रहे हैं तथा उनसे कह रहे हैं कि भले ही बालकृष्ण में नटखटपन है, लेकिन उसकी मनमोहक मुग्ध सुंदरता को देखकर कैसे हाथ उठा जा सकता है उस पर?

गोपांगनाओं कीं शिकायतों को सुनकर यशोदा ज्यों ही उसे मारने हाथ उठायी, त्योंही बालकृष्ण उसके चरणों पर गिरकर क्षमायाचना करने लगा। उसकी इस चेष्टा को देखकर यशोदा का क्रोध-कपूर की तरह पिघल गया। इस अवसर को पाकर गोप किशोर फिर से अपने मित्रों के साथ माखन चुराकर पेट भर खा लिया। अब पुनः यशोदा के पास गोपांगनाओं की शिकायत! इस बार यशोदा ने बालकृष्ण को ओखली से बाँध दिया, तो कन्हैया उस पर एकदम रूठ गया। उस पर क्रोधित होकर, छोटे-छोटे पत्थरों को फेंकने लगा। अपने लाडले की इस चेष्टा को देखकर फिर से यशोदा उस लीला मानुष की माया से प्रभावित हो गयी तथा उसके कपोलों पर चूमने लगी। ऐसे अरुणारुण कपोलों, मनमोहक दरहासों तथा मृदुमधुर कटि-मालिका के साथ पूरे गोकुल में अविश्रांत फिरनेवाला वह नंदकिशोर सचमुच मात्र बालक ही है? नहीं नहीं, वह तो परमात्मा का स्वरूप ही है।

लेकिन क्या करें? बालकृष्ण का अल्हडपन, तो दिन ब दिन बढ़ता ही जा रहा है। फिर से उस पर शिकायत करने गोपांगनाएँ नंद-यशोदा के घर चलीं, तो वहाँ का दृश्य देखकर वे आश्चर्य में डूब गयीं। बालकृष्ण तो बिलुकुल मासूम बच्चे की तरह जसोदा की गोद में छुपकर स्तन-पान कर रहा है। वात्सल्य प्रेम में, तन्मयता से आँख मूँदकर अपने बेटे के बालों को सँवारती बैठी उस मातृमूर्ति को देखकर आप भी मन ही मन हँस लेती हुई, वे सब वापस लौटीं।

वह लीलामानुष कृष्ण ही आज का श्रीवेंकटेश हैं।

* * *

७५

मिन्नक वेसालु मानि मेलुकोवय्या
सन्नल नी योगनिद्र चालु मेलुकोवय्या ॥ मिन्नक ॥

आवुलु पेयलकू गानणची बिदुकवले
गोविंदुडा इंक मेलुकोनवय्या
आवलीवले पडुचु पाटलु मरिगिवच्चि
त्रोवगाचुकुन्नारु पोद्दुन मेलुकोवय्या ॥ मिन्नक ॥

वाडल गोपिकलेल्ला वच्चि निन्नु मुद्दाड
गूडि युन्नारिदे मेलुकोनवय्या
तोडने यशोद गिन्नेतो बेरुगु वंटकमु
ईडकु देच्चि पेट्टे निक मेलुकोवय्या ॥ मिन्नक ॥

पिलिची नंदगोपुडु पेरुगोनी यदे, कन्नु
गोलकुल विच्चि मेलुकोनवय्या
अलरिन श्रीवेंकटाद्रि मीदि बालकृष्ण
इल मा माटलु विंटिविक मेलुकोवय्या ॥ मिन्नक ॥

श्री वेंकटेश को योगनिद्रा से जगाने का यत्न प्रकट किया गया है।

बछडे को उसकी माँ के पास दूध के लिए छोडने का समय हो आया है। तुम्हारे गाने सुनने के लिए तरसनेवाले तरुण वयस्क सभी, तुम्हारी राह देख रहे हैं। गोपांगनाएँ, तुम्हारे प्यार भरे मुंह को चूमने के लिए तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही हैं। यशोदा तो दही से कुछ खाद्य पदार्थ तैयार कर लायी है। तुम्हारे पिता नंद तो बार-बार नाम ले लेकर, तुम्हें ही पुकार रहे हैं। श्री वेंकटाद्रि पर स्थित हे नटखट कृष्ण! हमें पता है, तुम हमारी बातें सुन ही रहे हो। अब तो योग निद्रा से जाग जाओ।

* * *

७६

कानरटे पेंचरटे कट कटा बिड्डलनु
नेनु मीवलेने कंटि नेय्यमैन बिड्डनु ॥ कानरटे ॥

बायिट बारवेसिन पालु वेन्नलुनु
चेइ वेट्टकुंडुंदुरा चिन्न बिड्डलु
मी इंडल जतनालु मीरु चेसिकोनक
पायक दूरे रेवे प्रतिलेनिबिड्डनु ॥ कानरटे ॥

मूसिन कागुलने ई मुंगिटि पेरुगुलू
आस पडकुंदुरा आडे बिड्डलु
ओसरिंचि मोसपोक उंडलेक मीरु
सेसेरिंतेसिदूरु चेप्परानि बिड्डनु ॥ कानरटे ॥

चोक्कमैन कोप्पेरल जुन्नलु जिन्नलुनु
चिक्किन विडुतुरा चिन्नि बिड्डलु
मिक्किलि पूजलु सेसि मेच्चिंच दगरा
येक्कुवैन तिरुवेंकटेशुडैन बिड्डनु ॥ कानरटे ॥

यशोदा, अपने लाडले की करतूतों को कोसने के लिए आयी हुई गोपांगनाओं से कह रही है कि वह तो अन्य सभी बालकों की तरह आततायी ही है, लेकिन आप घर को ठीक संभालकर रखेंगी, तो यह सब नहीं होगा न?

यशोदा कह रही है कि मैं भी आप की तरह एक माँ ही हूँ! मैं भी बच्चों को पालने-पोसने की कला खूब जानती हूँ। दूध, मक्खन को बाहर रखेंगी, तो कौन बच्चा छोड सकेगा बोलो? दही को बाहर बरामदे में, मटकों में रख देना ठीक है क्या? पनीर को देखें, तो किसीके भी मुँह में पानी आ जाता है न? तो फिर उसे बाहर छींकों में देखें, तो बच्चे उसे चखे बिना रह पायेंगे क्या? देखिए, मैं मात्र इतना कहना चाहती हूँ कि मेरा पुत्र, सब लोगों के

लिए पूजनीय श्री वेंकटेश ही हैं। इसीलिए आप उसे कुछ मत कहिये। अपने घर को ठीक संभालिए, बस!

* * *

७७

तोल्लिटिवले गादु तुम्मेदा यिंक
नोल्लवुगा मम्मुनो तुम्मेदा ॥ तोल्लिटि ॥

तोरंपु रचनल तुम्मेदा कड्डु
दूरेवु गोंदुले तुम्मेदा
दूरिन नेरुगवु तुम्मेदा मम्मु
नोरग जूडकुवो वो तुम्मेदा ॥ तोल्लिटि ॥

तोलुप्रायपुमिंड तुम्मेदा कड्डु
दोलिचेवु चेगले तुम्मेदा
तोलकरि मेरुगवे तुम्मेदा यिंक
नुलिकेवु ममु गनि वोवो तुम्मेदा ॥ तोल्लिटि ॥

दोरवु वेंकटगिरि तुम्मेदा मा
तुरुमेल चेनकेवु तुम्मेदा
दोरके नी चनवुलु तुम्मेदा यिंक
नोरुलेरिंगिरि गदवो वो तुम्मेदा ॥ तोल्लिटि ॥

हिन्दी साहित्याकाश में सूर्य की तरह प्रभामय सूरदास विरचित भ्रमरगीत में कृष्ण को भ्रमर के रूप में संबोधित कर, गोपिकाएँ अपनी प्रणय व्यथा का आविष्कार करती हैं।

श्री वेंकटरमण को 'भ्रमर' के रूप में संबोधित किया गया है। गोपिकाएँ कहती हैं कि हे मधुकर! तुम तो बीते दिनों के मधुप नहीं रहे। अधिक अतिशयता को प्रकट करते हो। लेकिन छोटी-छोटी गलियों में खो जाते हो। तुम्हें इतना ही ज्ञान नहीं होता है कि यह तुम्हारे जैसों के लिए

उचित नहीं है। तिस पर हम पर तिरछी नजर भी डालते हो। हाँ, एक बात तो है। कम उम्र के हो, लेकिन अंतस्सार को बाहर लाने का सफल प्रयत्न करते हो।

तुम तो वर्ष के प्रथम-वर्षा की सौदामिनी हो! देखो। अब तुम हम पर मत इठलाओ। हमारे कबरी बंधों का भंग करना, मेरे वेंकटगिरि के सार्वभौम, हे स्वामी! क्या तुम्हें शोभा देती है? अब तो तुम्हारे बारे में सब लोगों को विदित हो गया है। हम भी तुम्हारे हो गये हैं।

* * *

७८

कुलकक नडवरो कोम्मलाला,
जल जल रालीनि जाजुलु मायम्मुकु ॥

ओय्यने मेमुगदली नोप्पुगा नडवरो
गय्यालि श्रीपादताकु कांतलाला
पय्येद चेरगु जारी भारपु गुब्बलमीद
अय्यो चेमरिंचे मायम्मकु नेन्नुदुरु ॥

चल्लेडि गंदवोडि मैजारि निलुवरो
पल्लकि वट्टिन मुद्दु पणतुलाल
मोल्लमैन कुंदनपु मुत्यालकुच्चुलदर
गल्लनुचु कंकणालु गदली मायम्मकु ॥

जमलि मुत्याल तोडि चम्मालिग लिडरो
रमणिकि मणुल नारतुलेत्तरो
अमरिंचि कौगिट नलमेलुमंग निदे
समकूडे वेंकटेश्वरुडु मायम्मकु ॥

नववधु अलमेल्मंगा की पालकी को ढ़ोनेवाली महिलाओं को सूचनाएँ दी गयी है।

नववधु अलमेल्मंगा अतिकोमल गात्रवाली हैं। श्री वेंकटेश से उसके विवाह के संदर्भ में विवाह वेदी तक पालकी में बिठाकर उसकी दासियां ले आ रही हैं। अन्नमाचार्य उन्हें सूचनाएं दे रहे हैं कि तनिक धीरे चलो! अगर आप की गति तेज हो, तो अलमेल्मंगा का कोमल शरीर मुरझा जायेगा। देखिए! अभी भी उनकी वेणी तनिक हट गयी है। केश-बंध में अलंकृत फूल भी झर जा रहे हैं। इसीलिए आप ठुमक ठुमककर मत चलिये। हमारी बिटिया रानी का शरीर थक जायेगा। दुकूल हट जायेगा। फलतः स्तनद्वय कंचुक से निकल बाहर हो जायेंगे। माथे पर स्वेदबिंदु छा जायेंगे। थकावट हो जायेगी। इतना कुछ कहने पर भी उनकी चाल नहीं बदली, तो अन्नमाचार्य ने उन्हें रोक दिया तथा कहने लगे –'अरी सुंदरांगियों! देखो तनिक धीरे चलो! देखो हमारी अलमेल्मगा की माँग में कस्तूरी चंदन का जो चूर्ण था, वह सब इधर-उधर हटकर शरीर पर फैल गया है। कंगन के अधिक हिलने से देखो, हमारी सुकोमल रानी किस तरह कुम्हला गयी है?' इन बातों को सुनते सुनते, पालकी ढ़ोनेवाली महिलाएँ अपने आप में हँसती हुई आगे बढ़ने लगीं। पालकी कल्याण-वेदी तक पहुँच गयी। अलमेल्मंगा पालकी से उतरीं। उनकी अलौकिक सुंदरता को देखकर अन्नमय्या के आनंद की सीमा न रही। लेकिन अपनी प्यारी बिटिया की इस स्निग्ध सुंदरता को देखकर किसी की नजर लग जाय, तो क्या करें! इसीलिए इन महिलाओं से उन्होंने निवेदन किया कि अलमेल्मंगा की आरती उतारें। पालकी से उतरते समय उन्हें मोतियों की पादुकाएँ पहनाएँ।

इस तरह अन्नमय्या के नेतृत्व में अलमेल्मंगा तथा श्रीवेंकटेश का विवाह महोत्सव अत्यंत वैभव के साथ संपन्न हुआ। वर-वधू की जोडी खूब सजी है। इस भक्त शिरोमणि के नयन अतुलित आनंद के साथ नम हो गये।

* * *

७९

इन्नि राशुल युनिकि इंति चेलुवपु राशि
कन्ने नी राशि कूटमि कलिगिन राशि ॥ इन्नि ॥

कलिकि बोमविंड्लु गल कांतकुनु धनू राशि
मेलयु मीनाक्षिकिनि मीन राशि
कुलुकु कुचकुंभमुल कोम्मुकुनु कुंभ राशि
वेलगु हरि मध्यकुनु सिंह राशि ॥ इन्नि ॥

चिन्नि मकरांकपु बय्येद चेडेकु मकर राशि
कन्ने प्रायपु सतिकि कन्ने राशि
वन्ने मै पैडि तुलतूगु वनितकु तुल राशि
तिन्ननि वाडि गोल्ल सतिकि वृश्चिक राशि ॥ इन्नि ॥

आमुकोनु नोरपुल मेरयु नतिवकु वृषभ राशि
गामिडि गुट्टु माटल सतिकि कर्कटक राशि
कोमलपु चिगुरु मोवि कोमलिकि मेष राशि
प्रेम वेंकटपति गलसे, प्रिय मिथुन राशि ॥ इन्नि ॥

ज्योतिष शास्त्र में सत्ताईस नक्षत्रों को बारह राशियों में बांटा गया है तथा मेषादि उन राशियों के लक्षण भी बता दिये गये हैं। इस रचना की विशेषता यही है कि एक नायिका ही में इन सभी राशियों के लक्षणों को दिखाया गया है।

धनुष जैसी भौहों के होने से उस कांता में 'धनू' राशि है। मछली जैसी आँखें होने के कारण उसमें 'मीन' राशि के लक्षण हैं। सुडौल तथा कुंभ (घडा) जैसे उरोजों को देखकर कहा जा सकता है कि उसकी राशि कुंभ है। सिंहनी जैसी महीन कमरवाली की राशि 'सिंह' राशि ही हो सकती है। मन लुभानेवाली छोटी मकरांक जैसी चूनरवाली मुग्धा की राशि, 'मकर राशि' ही होगी। मनमोहक शुभांगी सति तो 'कन्या' राशि

की होगी। शरीर के सभी अंगों में समान रूप से बिखरे हुए लावण्य के कारण उसमें 'तुला' राशि भी है। तीक्ष्ण नख सौंदर्य को देखकर लग रहा है कि वह नायिका 'वृश्चिक' राशि की है। स्वाभिमान तथा अतिशयता की कांतियों से आकर्षित करनेवाली सुंदरी में 'वृषभ' राशि के लक्षण दिखायी दे रहे हैं। लज्जा से कम बात करनेवाली लतांगी 'कर्काटक' राशि की लगती है। कोमल अधर-पल्लवों को देखने से 'मेष' राशि का स्मरण हो रहा है। इस तरह बारह राशियों के लक्षणों को, नायिका के अंगों से सादृश्य स्थापित करते हुए अंत में वे कहते हैं कि प्रणय भावना से वेंकटपति से रतिक्रीडा के लिए उद्युत होनेवाली नायिका में 'मिथुन' राशि दृश्यमान है। अन्नमाचार्य की रचनाओं में ऐसे चमत्कार यत्र-तत्र मिलते ही रहते हैं।

* * *

८०

चक्कनि जाण इन्निट जवरालु
चक्केर बोम्मवंटिदि जवरालु ॥ चक्कनि ॥

कन्नुल तप्पक चूचि कप्पुरान निन्नु वेसि
सन्न सेसी नदिवो जवरालु'
वेन्नेल नव्वुलु नव्वि वेडुक नीकु पुट्टिंचि
चन्नुल नोरिसी निन्नु जवरालु ॥चक्कनि ॥

तेर मरुगुननुंडि तेनेगार माटलाडि
सरिवेनगी नीतो जवरालु
विरुलु नीपै चल्लि विंत सेतलेल्ला चेसि
सरसमुलु नेरपीनि जवरालु ॥ चक्कनि ॥

तमकमु नीकु रेचि दयपुट्ट सेवसेसि
समुकान कोसरीनि जवरालु
अमर श्री वेंकटेश अन्निटा नीवु गूडगा
जमलि रतुल चोक्की जवरालु ॥चक्कनि ॥

अलमेल्मंगा को 'श्रृंगार की देवी' के रूप में दिखाया गया हैं।

अलमेल्मंगा सुंदरी है और प्रवीणा भी है। वह शर्कर की गुडिया है। अपनी आँखों से मुग्ध मनोहर रीति से देख रही है। ज्योत्स्ना सी हँसी बिखेरती हुई, अपने पयोधरों से श्री वेंकटेश को दबा रही है। मधुर-मधुर सरस वचनों से स्वामी को लुभा रही है। फूलों की उन पर वर्षा करती हुई, विविध श्रृंगार चेष्टाओं से उन्हें आकर्षित कर रही है। अपनी सेवाओं से श्री वेंकटपति में काँक्षा को जगाकर, उनके साथ 'मदन क्रीडा' का सुख ले रही है।

* * *

८१

पोदले निंडुकलल पुन्नम रेडु
अदनु तप्पक जाजराडुदुवु रावय्य ॥पोदले ॥

जलजाक्षि मोमुनु चंद्रोदयमाये
नेलकोन्न नव्वुल वेन्नेल गासेनु
कलिकि कन्नुल नल्लकलुवलु विकसिंचे
अलरि ईकेतो जाजराड रावय्या ॥पोदले ॥

एनसि जव्वनमुन नेतेंचे वसंतकाल
मोनरि मोविचिगुरु लुप्पतिल्लेनु
गोनकोन्न तुरुमुन कूडे तुम्मेद मूक
अनुमानिंचक जाजराडुदुवु रावय्या ॥पोदले ॥

कुंकुम चेमट चनुकोप्पेरल निंडुकोने
कोंकोक गोल्ले बुरंट कोम्मुलायेने
लंकेलै श्री वेंकटेश ललनतो कूडितिवि
अंकेल ने पोद्दू जाजराडुदुवु रावय्या ॥पोदले ॥

शरद ज्योत्स्ना में अलमेल्मंगा के साथ नृत्य करने के लिए श्रीवेंकटेश को आमंत्रित किया गया है।

प्रकृति के मनमोहक वातावरण में पूर्णिमा के दिन चंद्रमा अपनी पूरी कलाओं के साथ प्रकाशमान हैं। कमल जैसी नयनोंवाली अलमेल्मंगा के मुँह में चंद्रोदय हुआ है। उनकी मुस्कुराहट से खिली ज्योत्स्नाओं में, नीलकमल-सी आँखें खिल गयी हैं। पूर्ण वसंत काल सी तरुणाई, उनमें प्रवेश कर गयी है। उनके अधरों में नवपल्लवों की-सी लालिमा छायी हुई है। फूलों से भरे, उनके केशपाश में भ्रमरों के बृंद मंडरा रहे हैं। नारिकेल सम, स्तन द्वय पर कुंकुम-युक्त स्वेद व्याप्त हैं। हे स्वामी! अलमेल्मंगा देवी से आपका बंधन शाश्वत है। हे वेंकटेश! चंद्रमा की शीतल ज्योत्स्नाओं में उस देवी के साथ नृत्य करने आइये।

* * *

८२

ओकटि कोकटि गूडदोयम्म नीयंदे
सकलमु नेट्टुवले संतसेसितिवे ॥ ओ ॥

तानकु कुचालु दंतिकुंभाल पोलिते
ई नडुमु सिंहमु नेल पोलेने
अनिवट्टि नीकन्नुलंबुजाल पोलितेनु
आननमु चंदुरुनि नदियेल पोलेने ॥ ओ ॥

अतिव नी चेतुलु बिसांगमुल पोलितेनु
इतवै नडवु हंसनेल पोलेने
चतुरत नासिकमु संपेंग पोलितेनु
तति नी कुरुलु तुम्मेदलनेल पोलेने ॥ ओ ॥

नेवलपु नीयारु नीलाहि पोलितेनु
ईवल मेनु मेरुपुनेल पोलेने

श्री वेंकटेशुमोवि चिन्नि केंपुलंटिंचि
आवेल दंतालु वज्रालै येट्टवोलेने ॥ओ ॥

श्री वेंकटेश की पत्नी, अलमेल्मंगा के सौंदर्य में विरोधाभास का सम्मेलन प्रस्तुत किया गया है।

अलमेल्मंगा का स्तन-द्वय तो हाथी के कुंभ-स्थल सा है, लेकिन उसकी कमर तो हाथी का विरोधी – सिंह की कमर सी पतली है। उसके नेत्र कमल हैं, तो मुँह चंद्रमा है। हाथ तो मृणाल हैं, तो उसकी चाल तो हंस की चाल है! उसकी नासिका तो चंपक का फूल है, तो केश - अलि का समूह है, जो चंपक के सुगंध से दूर भाग जाते हैं। यह कैसे संभव है? उसकी रोमावली तो विपिन कानन ही है, किंतु उसका कोमल शरीर तो सौदामिनी की तरह नाजुक है। श्री वेंकटेश के अधर तो छोटे-छोटे मानिकों की राशि ही है, परन्तु दंतावली तो वज्र सम है।

दोनों की जोडी खूब बनी है।

* * *

८३

अलमेलुमंग, नी अभिनव रूपमु
जलजाक्षु कन्नुलकु चबुलिच्चेवम्मा ॥ अल ॥

गरुडाचलाधीशु घनवक्षमुननुंडि
परमानंद संभरित वै
नेरतनमुलु चूपि निरंतरमु नाथुनि
हरुषिंचग जेसिति गदम्मा ॥ अल ॥

शशिकिरणमुलकु चलुवल चूपुलु
विशदमुगा मीद वेदजल्लुचु
रसिकत पेंपुन गरगिंचि एप्पुडु नी
वशमु चेसुकोंटि वल्लभुनोयम्मा ॥ अल ॥

रट्टडि श्री वेंकटरायनिकि नीवु
पट्टपु राणिवै परगुचु
वट्टि माकुलिगिरिंचु वलपुमाटलविभु
जट्टिगोनि उरमुन सतमैतिवम्मा ॥ अल ॥

अलमेल्मंगा के अलौकिक सौंदर्य का सुभग सुंदर रीति में वर्णन किया गया है।

हे अलमेल्मंगा! अपनी रूप माधुरी से आपने वेंकटगिरीश को अपने वश में कर ही लिया। इस गरुडाचलेश के वक्षःस्थल को ही आप अपना निवास-स्थान बनाकर परमानंद में डूबी हुई हों। अपनी चतुरता तथा कुशलता से, आपने पति के हृदय को अपने अधीन में ले लिया! आपकी नजरें शशि की किरणों को शीतलता प्रदान करनेवाली हैं! उन शीतल नजरों को जब आपने अपने विभु पर बरसाया, तो उनकी रसिकता से प्रभु सम्मोहित होकर आपके वश में आ गये हैं! उस वेंकटगिरीश की पटरानी हैं आप! आपकी मोह भरी बातों से, सूखे हुए पेड भी फिर से पल्लवों को धर जाते हैं – माने उनमें वसंत-ऋतु फिर से आ जाती है! ऐसी वाक्-माधुरी से ही तो आप, उस श्रीनिवास को भी आकर्षित कर उनके वक्षःस्थल पर सवार हो ही गयी हैं तथा वही आपका शाश्वत निवास स्थान हो गया है!

* * *

८४

ईकेकु नीकु दगु नीडु जोडुलु
वाकुच्चि मिम्मु बोगडवशमा योरुलकु ॥ ईकेकु ॥

जट्टिगोत्र नी देवुलु चंद्रमुखि गनुक
अट्टे निन्नु श्री रामचंद्रुडनदगुनु
चुट्टमै कृष्णवर्णपु चूपुल यापे गनुक
चुट्टकोनि निन्नु कृष्णुडवनदगुनु ॥ ईकेकु ॥

चंदमैन वामलोचनयापे गनुक
अंदरु निन्नु वामनुडनदगुनु
चेंदि याके यप्पटिकिनि सिंहमध्यगनुक
अंदे निन्नु नरसिंहुडनि पिल्वदगुनु ॥ ईकेकु ॥

चेलुवमैन यापे श्री देवियगु गनुक
अलश्रीवक्षुडवनि याडदगुनु
अलमेल्मंग यट्टि रोमावलि गलदीगान
इल शेषाद्रि श्री वेंकटेशुडनदगुनु ॥ ईकेकु ॥

अलमेल्मंगा तथा श्री वेंकटेश की जोडी की प्रशंसा की गयी है। सहज-सुंदर रीति से दोनों के लक्षण मिल-जुलने का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

अलमेल्मंगा चंद्रमुखी हैं तथा श्री वेंकटेश को श्रीरामचंद्र कह सकते हैं। अलमेल्मंगा की चितवन तो कृष्ण वर्ण की है, इसलिए श्री वेंकटेश को श्रीकृष्ण का नाम दिया जा सकता है। वे तो 'वामनयना' हैं, इसीलिए वेंकटेश भी 'वामन' बन गये हैं। अलमेल्मंगा तो 'सिंहमध्या' (सिंह सी पतली कमरवाली) हैं, श्री वेंकटेश, नरसिंह कहे जा सकते हैं। वे श्रीदेवी हैं, उन्हें अपने वक्षःस्थल पर सदा धरनेवाले 'श्रीवक्ष' ही तो हो सकते हैं न! अलमेल्मंगा तो गहन रोमावली रखती हैं, इसीलिए श्री वेंकटेश तो 'शेषाद्रि' ('शेष' आदि काननों के स्वामी) हो गये हैं।

'सहजालंकार' का उपयोग इस गीत में किया गया है।

* * *

८५

चेलुलाल ई मेलु चेलुवुडे चूचुगानि
एलिमि तोडुत मोक्कि येरिगिंचरे ॥ चे ॥

वनित जव्वनपु वसंतमुलोने
पेनुगोनि विरहपु वेसवि मिंचे
ननिचे बेंजेमट वानकालमु नंतलोने
विनयमुतो पतिकि विन्नविंचरे ॥ चे ॥

कांतपुलकल शरत्कालमुनदे तोचे
चिंतल मंचुलतो हेमंतमु मुंचे
चेंत गोर्कु, तेन्नुलोत्ति शिशिरवेल एतेंचे
इंतकुनीके विभुनि नीडकु तोडितेरे ॥ चे ॥

चेलियकु कोप्पुवीडे चीकटि कालमुनंदे
नेलकोने सिग्गुल वेन्नेल कालमु
अलमे श्रीवेंकटेशु इंतलोने तानेवच्चि
पिलिचि सारेकु निट्टे प्रेमरेचरे ॥ चे ॥

विरह से पीडित नायिका के शारीरक लक्षणों द्वारा छः ऋतुओं का वर्णन किया गया है।

विरहोत्कंठिता की सखी अपनी सहेलियों को बता रही है कि हे सखि! विरह में कृशित नायिका के शरीर को देखने से संभवतः उसके प्रिय वेंकटेश को उसकी दीनावस्था का आभास हो जायेगा। कृपया आप लोग जाकर उन्हें ले आइये। नायिका का शरीर जो सर्वदा यौवन रूपी वसंतकाल में ही रहता है, लेकिन अब तो 'विरह' रूपी ग्रीष्म ऋतु में प्रवेश कर गया है। ग्रीष्म के आगमन से निकलनेवाला 'स्वेद' वर्षाऋतु-समान है। नायक के स्मरण से नायिका का शरीर पुलकांकित हो गया है, जो शरतकाल की शोभा सी है। उसके मन में घनी चिंता छायी हुई है, उससे शीतलता बढ़कर हेमंत ऋतु के आगमन की सूचना मिल रही है। इतने ही में शिशिर की वेला भी हो आयी है। सखी की वेणी के खुल जाने से जो अंधकार छा गया है, उसीमें सखी की लज्जा की कांति घुलमिल जा रही है, जो फिर से ज्योत्स्ना के आगमन का कारण हो रहा है। इसी शुभ समय में अगर वेंकटगिरीश,

स्वयं आकर अपनी प्रियतमा में छः ऋतुओं का सुंदर समागम देखकर, उसे हृदय से लगा ले, तो बहुत आनंद मिलेगा न?

* * *

८६

इदिगाक सौभाग्य मिदि गाक तपमु मरि
इदिगाक वैभवंबिक नोकटि गलदा?

अतिव जन्ममु सफलमै परम योगिवले
नितर मोहापेक्ष लिन्नियुनु विडिचे
सति कोरिकलु महाशांतमै इदे चूड
सतत विज्ञान वासनवोले नुंडे ॥ इदि ॥

तरुणि हृदयमुसार्थत बोंदि विभुमीद
परवशानंद संपदकु निरवाये
सरसिजानन मनोजयमंदि, इंतलो
सरि लेक, मनसु निश्चल भावमाये ॥ इदि ॥

श्री वेंकटेश्वरुनिर्जिंतिंचि परतत्व
भावंबु निजमुगा बट्टे चेलि यात्म
देवोत्तमुनिकि आधीनुरालै इपुडु
लावण्यमतिकि नुल्लंबुदिरमाये ॥ इदि ॥

श्री वेंकटेश के निरंतर ध्यान में खोकर, एक तापसी बनी – लक्ष्मी का वर्णन प्रस्तुत है।

इससे बडा वैभव जप-तप तथा सौभाग्य और कहाँ मिलते हैं? स्वामी के ध्यान में, माया-मोह छोड चुकी इस नायिका का जन्म सफल है। इसकी भ्रांति तथा इच्छाएँ निष्क्रिय हो, छूट चुकी हैं। शांत स्थिति में, सतत ज्ञानप्राप्ति के चिह्नों के साथ दिखायी दे रही है।

भक्ति की परवशता का आगार बनकर इसका हृदय कृतार्थ हो गया है। मन को अपने वश में लाकर इस पद्माक्षी ने चिर प्रशांति को प्राप्त कर लिया है।

श्री वेंकटेश्वर के निरंतर ध्यान से, परतत्त्व ज्ञान को इस नायिका ने प्राप्त कर लिया है। अब इस लावण्यवती का मन दृढ़ तथा निश्चिंत है, क्योंकि यह स्वामी की कृपा के योग्य हो गयी है।

* * *

८७

गरुड ध्वजंबेक्के कमलाक्षु पेंड्लिकि
परुषलदिवो वच्चे बैपै सेविंचे ॥ गरुड ॥

पाडिरि सोबानु नदे भारतियु गिरिजयु
आडिरि रंभादुलैन अच्चरलेल्ल
कूडिरि देवतलेल्ल गुंपुलै श्री वेंकटाद्रि
वेडुकलु मीरग श्रीविभुनि पेंड्लिकिनि ॥ गरुड ॥

कुरिसे पुव्वुलवान कुप्पलै येंदुचूचिन
मोरसे देवदुंदुभि म्रोतलेल्लंनु
बेरसे संपदलेल्ल पेंटलै श्रीवेंकटाद्रि
तिरमै मिंचिन देवदेवुनि पेंड्लिकिनि ॥ गरुड ॥

वेसिरि कानुकलेल्ल वेवेलु कोप्पेरल
पोसिरदे तलभालु पुण्यसतुलु
आसल श्रीवेंकटेशुडलमेलु मंगदानु
सेसलु बेट्टिनयट्टि सिंगारपु पेंड्लिकि ॥ गरुड ॥

श्री वेंकटेश के शोभामय विवाह को देखने तिरुमल शिखरों पर पधारे हुए अतिथियों का विवरण दिया गया है। विवाह से संबंधित आचार-व्यवहारों का वर्णन बडी ही तत्परता से किया गया है।

गरुडध्वज देखो फहरा दिये गये है। कमल नयनों वाले स्वामी का विवाह है न? नभोमंडल से अनेक महिमावान तथा कीर्तिमान – तिरुमल पहुँच गये हैं, स्वामी की सेवा करने! स्वामी की कीर्ति-छटायें देखो, लहरा दी गयी हैं।

मंगल गीत गा रही हैं – भारती तथा पार्वती देवियाँ। रंभादि अप्सराएँ – नाट्याभिनय कर रही हैं। श्री वेंकटाद्रि के शिखरों पर अनेकानेक, देवताएँ वृन्दों में आ रही हैं, भगवान के विवाहोत्सव में भाग लेने के लिए! जहाँ देखो वहाँ, प्रसूनों की वर्षा हो रही है। दिव्य-दुंदुभियों का नाद सुनायी दे रहा है। अनुपमेय स्वामी के इस विवाहोत्सव में, वैभवों की फसलों का खूब विस्तार सा हुआ है। हजारों उपहार दंपति को दिये गये हैं। पीले मांगलिक तंदुल- नवदंपति पर सुमंगलियाँ डाल रही हैं। श्री वेंकटेश तथा अलमेल्मंगा के मनोभिराम परिणय में नव वर-वधू भी आपस में मांगलिक तंदुल (अक्षत) सिरों पर डाल लेने की क्रीडा संपन्न हो रही है। देखो! इस दृश्य को मन में छाप लो!

* * *

८८

मंचि मुहूर्तमुन श्रीमंतुलिद्दरु
चंचुल पूवुदंडलु चातुकोनेरदिवो ॥ मंचि ॥

सोदि पेरंटाड्लु सोबान पाडगानु
हरियु सिरियु पेंड्लि याडेरदे
तोरलि अंतटा देव दुंदुभुलु मोरयग
गरिम बासिकमुलु कट्टकोने रदिवो ॥ मंचि ॥

मुनुलु मंगलाष्टकमुलु चदुवुचुंडग
पेनगुचु सेसलु पेट्टेरदे
घनुलु बह्मादुलु कट्नमुल चदुवग
ओनर पेंड्लिलपीटपै नुन्नारदिवो ॥ मंचि ॥

अमरांगनलेल्लानु आरतुलिय्यगानु
कोमरारविडेलंदुकोने रदे
अमरि श्रीवेंकटेशुडलमेलुमंग गूडि
क्रममुतो वरमुलु करुणिंचेरदिवो ॥ मंचि ॥

अलमेलमंगा तथा श्री वेंकटेश के अद्भुत विवाह-महोत्सव का वर्णन मिलता है।

सुहागिनियाँ मंगलप्रद गीत गा रही हैं। देवदुंदुभियाँ हर तरफ बज रही हैं। इसी समय अलमेलमंगा तथा श्री वेंकटेश दोनों अपने मस्तकों पर पाटी (बाषिकमु) बाँध रहे हैं, जो विवाह के समय की एक परंपरा है। मुनिश्रेष्ठों के मंगलवचनों के बीच चौकियों पर बैठे वर-वधू, दोनों अक्षत धारण (हल्दी युक्त तंदुल) कर रहे हैं। अमरकांताएँ आरती उतार रही हैं और वर-वधू मंगल-तांबूल स्वीकार रहे हैं।

इस तरह अलमेल्मंगा श्रीवेंकटेश का विवाह संपन्न होने के बाद, वह नव-दंपति, करुणा भरी दृष्टि से भक्तों की मनोकामनाएँ सफल होने का वरदान दे रहे हैं।

* * *

८९

शोभनमे शोभनमे
वैभवमुल पावनमूर्तिकि ॥ शो ॥

अरुदुग मुनु नरकासुरुडु
सिरुलतो जेरनु देच्चिन सतुल
परुवपु वयसुल बदारुवेलगु
सोरिदि पेंड्लाडिन सुमुखुनिकि ॥ शो ॥

चेंदिन वेडुक शिशुपालुडु
अंदि पेंड्लाडग नवगलिंचि

विंदुवलेने ताविच्चेसि रुक्मिणी
संदि बेड्लाडिन सरसुनिकि ॥ शो ॥

देवदानवुलु धीरतनु
धावतिपडि वारिद्दरिवगनु
श्री वनितामणि चेलगि पेंड्लाडिन
श्री वेंकटगिरि श्रीनिधिकि ॥ शो ॥

श्री वेंकटेश तथा अलमेल्मंगा के विवाहोपरांत, नवदंपति के प्रथम समागम की शुभवेला (शोभनमु) का वर्णन किया गया है। विवाह से संबंधित हर क्रिया-कलाप में, गीतों के गाये जाने की प्रथा है।

गीत के पहले चरण में नरकासुर द्वारा बंधित सोलह हजार सुंदरियों को उस दानव का वध कर, विमुक्त करना ही नहीं, उनके 'कन्यात्व' को भी मुक्त कर, अपनी पत्नियों के रूप में स्वीकारने का वर्णन है।

दूसरे चरण में, रुक्मिणी के स्वयंवर में उपस्थित होकर, शिशुपालादि अपने विरोधियों के घमंड को चकना-चूर कर रुक्मिणी से विवाह रचने का वर्णन है।

अंततः देव-दानवों के समुद्र मंथन की वेला में श्री लक्ष्मी का आविर्भाव होते ही, उनको अपना लेनेवाले महाविष्णु के रूप में उनका, जयजयकार करते हैं।

* * *

९०

कोरिन कोरिकेलेल्ला कोम्म यंदे कलिगीनि
चेरि कामयज्ञमिट्टे सेयवय्या नीवु ॥ कोरिन ॥

सुदति मोवि तेनेलु सोमपानमु नीकु
पोदुपैन तम्मुलमु पुरोडाशमु

मदन परिभाषलु मंचि वेदमंत्रमुलु
अदे कामयज्ञमु सेयवय्या नीवु ॥ कोरिन ॥

कलिकि पय्येद नीकुगप्पिन कृष्णाजिनमु
नलुवैन गुब्बलु कनक पात्रलु
कलिसेटि सरसालु कर्म तंत्र विभवालु
चेलगि काम यज्ञमु सेयवय्या नीवु कोरिन ॥

कामिनि कौगिलि घनमैन यागशाल
आमुकोन्न चेमटले अवभृथमु
ईमेरने श्रीवेंकटेश नन्नु नेलिति
चेमुंचि कामयज्ञमु सेयवय्या नीवु ॥ कोरिन ॥

अलमेल्मंगा तथा वेकटपति की रति-क्रीडा को 'श्रृंगार यज्ञ' के रूप में वर्णन किया गया है।

अलमेल्मंगा का अधरामृत है– सोमरस। पान जो अलमेलमंगा खा रही है – वह है पुरोडाश (होम में समर्पित प्रसाद का शेष भाग) रति समय में जो सल्लाप होता है, वही वेदमंत्र है। अलमेल्मंगा की ओढ़नी कृष्णाजिन है तथा उनके उरोज (पयोधर) सुवर्णकलश हैं। दंपति के परस्पर परिहास तथा छेडछाड, यज्ञ के रहस्य हैं। उनका आलिंगन - यागशाला है तथा रति के बाद का स्वेद मंगलस्नान है।

* * *

९१

येमोको चिगुरुटधरमुनु एडनेड कस्तुरि निंडेनु
भामिनि विभुनकु व्रासिन पत्रिक कादुकदा ॥ येमोको ॥

कलिकि चकोराक्षिकि कडकन्नुलु कैंपै तोचिन
चेलुवंबिप्पुडिदेमो चिंतिंपरे चेलुलु

नलुवुन प्राणेश्वरूपै नाटिनया कोन चूपुलु
निलुवुग पेरुकग नंटिन नेत्तुरु कादुकदा **|| येमोको ||**

पडतिकि चनुगवमेरुगुलु पै पै पय्येद वेलुपल
कडुमिंचिन विधमेमो कनुगोनरे चेलुलु
उडुगनि वेडुकतो प्रियुडोत्तिन नख शशिरेखलु
वेडलग वेसविकालपु वेन्नेल कादुकदा **||येमोको ||**

मुद्दिय चेक्कुल केलकुल मुत्यपु जल्लुल चेर्पुल
ओद्दिकलागुलिवेमो ऊहिंपरे चेलुलु
गद्दरि तिरुवेंकटपति कौगिटि यधरामृतमुल
अद्दिन सुरतपु चेमटल अंदमु कादुकदा **|| येमोको ||**

अलमेल्मंगा की अलौकिक सुंदरता का वर्णन अनोखे ढ़ंग से किया गया है।

'हे सखी! अलमेल्मंगा के अधरों पर कस्तूरी जो लगी हुई है, वह तो कहीं अपने पति श्रीवेंकटेश को लिखा हुआ पत्र तो नहीं है। तनिक ध्यान दो। चकोर जैसी काली आँखोंवाली अलमेल्मंगा की कनखियों में लालिमा जो छायी हुई है, वह क्या हो सकती है? अपने प्राणेश्वर श्री वेंकटेश पर नजरों के बाण जो उन्होंने साधे थे, उन्हें बाहर खींचने के समय बाणों को लगा हुआ खून तो नहीं है न? देवी का वक्षद्वय तो कुछ उभरा हुआ लग रहा है। रतिक्रीडा में स्वामी द्वारा किये गये नखक्षतों रूपी शशि रेखाओं के विकसन से निकली ज्योत्स्ना तो नहीं है न? श्रीसति के कपोलों पर मोती चमक रहे हैं। शायद श्री वेंकटेश से श्रृंगार-केली के समय थकावट के कारण निकले हुए स्वेद की वे बूँदें हैं।

सौंदर्य की देवी अलमेल्मंगा की मुग्ध-मनोहर रम्यता का अद्भुत आविष्कार किया गया है।

* * *

९२

नेनेंदुवोये तानेंदुवोयी
रानीले रानीले रानीले ॥

मीनैन नाटि तन मिडुकेल्ल दिगवले
कानीले कानीले कानीले ॥
तलचूपे नाटि तल्पेल्ल दिगवले
तलचनी तलचनी तलचनीवे ॥
किरियैन नाटि किटुकेल्ल दिगवले
तिरुगनी तिरुगनी तिरुगनीवे ॥
हरियैननाटि अदटेल्ल दिगवले
जरगनी जरगनी जरगनीवे ॥
वटुवैन नाटी वस विडुवगावले
तडवकु तडवकु तडवकुवे ॥
कलुषिंचे नाटि कडिमेल्ल दिगवले
अलुगनी अलुगनी अलुगनीवे ॥
सति बासे नाटि चलमेल्ल दिगवले
ततिगानी ततिगानी ततिगानीवे ॥
मुसलैन नाटि मुसपेल्ल दिगवले
विसुगनी विसुगनी विसुगनीवे ॥
मानैन नाटी मदमेल्ल दिगवले
पोनीवे पोनीवे पोनीवे ॥
कलिकैन नाटि गजरेल्ल दिगवले
चेलगनी चेलगनी चेलगनीवे ॥
वेडुकतो नाटि वेकंटपति नन्नु
कूडनी कूडनी कूडनीवे ॥

दशावतारों का वर्णन किया गया है। अपने से रूठकर दूर हो गये प्रिय वेंकटेश के व्यत्तित्व के बारे में नायिका अपनी सहेली को बता रही है।

हे सखी! देखेंगे, वह मुझसे कितना दूर रह सकेगा। जब वह मत्स्य बना था न, उस समय का जो घमंड था, वह पूरा उतरने दो। कूर्मावतार लेने का जो गर्व था, उसी स्थिति में और कुछ दिन रहने दो। खैर! किरि (वराह) बनने का रहस्य किसी तरह खुलना ही तो है। घूमने दो, जब तक घूमेगा। हरि (नृसिंह) जब बना था, वह ऐंठ अभी भी उसमें है। उसे पहले उतरने दो। वामन के रूप में जब आया था न, उस समय का गुरूर पूरा उतरने तक उसी तरह उठकर रहने दे। परशुराम के रूप में सदा वह क्रोधावस्था में ही रहता था। उस समय का जो गुरूर है, उसे भी वश में आना चाहिए न। सति को खो देने का जो परिताप है (रामावतार), उसे भी कम होने दे। कृष्ण बलराम बनने के दिनों की उद्धति जो है, उसे कम होने देना। अरि भयंकर दानवों का वध करने, जब पेड में प्रवेश करना पडा, (तत्त्वोपहार - श्रीमान् नल्लान चक्रवर्तुल रघुनाथाचार्य - पृ.सं.१५६) उस समय का अभिमान उसमें अभी भी है, रहने दो। कल्कि बनने की उद्विग्नता का भी प्रदर्शन करने दो। ये सब हो जाने के बाद ही, उस वेंकटपति को, मुझे प्रमोद से मिलने दूँगी। तब तक मैं इसी तरह प्रतीक्षा करती ही रहूँगी।

* * *

१३

विरहमोक्कंद माय विच्चेयवय्य
निरति नाके जूचि नीवंटा मोक्कितिनि ॥विरह॥

चक्कटि चेय्ये चेलिकि शेषपर्यंकमु
जक्कुव चन्नलु शखचक्रमुलु लाय
उक्कचेमटे जलधि उनिकि सेसुक निन्नु
जक्कनि सति दलचि सारूप्यमंदे ॥ विरह ॥

चलुव कस्तूरि पूत सरिनील वर्णमाये
सिरुलगट्टिन तालि श्रीधर भावमाये
वरुस वलपु भक्ति वत्सलमाये
इरवै श्रीवेंकटेश इंतलो नीवु गूडगा
सरुस निन्नंटि नाके सारूप्यमंदे ॥ विरह ॥

अलमेल्मंगा तथा श्रीवेंकटेश के रूपों में अभिन्नता की व्याख्या की गयी है।

कपोल के नीचे स्थित करतल, शेषपर्यंक है। अलमेल्मंगा का वक्षःस्थल तो शंख-चक्र समान है। श्रृंगार-क्रीडा में निकला हुआ स्वेद 'जलधि' ही है। कस्तूरी का लेपन नील-वर्ण से सुशोभित है। स्वामी को देखकर आश्चर्य से निश्चल दृष्टि अनिमिषत्व का प्रतीक है। अलमेल्मंगा के कंठ-स्थान पर अलंकृत मंगलसूत्र ही श्रीधर-भाव है। उनका श्रियःपति के प्रति जो आराधना का भाव है, वही भक्त-वत्सलता है। श्रीवेंकटेश तथा अलमेल्मंगा में सारूप्यता की स्थापना प्रकटित हुई है।

* * *

९४

पलुकु तेनेल तल्लि पवलिंचेनु
कलिकि तनमुल विभुनि गलिसिनदि गान ॥ पलुकु ॥

निगनिगनि मोमुपै नेरलु गोलुकुलु जेदर
वगलैन दाक चेलि पवलिंचेनू
तेगनि परिणतुलतो तेल्लवारिन दाक
जगदेक पति मनसु जट्टिगोने गाक पलुकु ॥

कोंगु जारिन मेरुग गुब्बलोलयगदरुणि
बंगारूमेडपै पवलिंचेनू
चेंगलुव कनुगोनल सिंगारमुलु दोलुक
नंगज गुरुनितो नलसिनदि गान ॥पलुकु ॥

मुरिपेंपु नटनतो मुत्याल मलगुपै
परवशंबुन दरुणि पवलिंचनू
तिरुवेंकटाचलाधिपुनि कौगिट गलसि
अरविरै नुनु जेमट अंटिनदि गान ॥ पलुकु ॥

श्री वेंकटेश से रतिक्रीडा के बाद, मंदिर में आकर सो रही अलमेल्मगा का मनोज्ञ चित्रण है।

मधुरोक्तियों में चतुरा, अलमेल्मंगा अपने प्राणनायक श्री वेंकटेश से रतिक्रीडा में थकित हो, निद्रित है। अलमेल्मंगा के कांतिमय वदन पर, नीली लटें, बिखरी हुई हैं। प्रभात वेला तक भी वे नींद से उठी नहीं हैं, क्योंकि सुबह तक विविध रीतियों में पति को उन्होंने संतुष्ट किया है। कनखियों से लाखों श्रृंगार भावों को बरसाती हुई, उस अंगजगुरु (श्रीवेंकटेश) से मिलने के कारण, अलमेल्मंगा इतनी थकी स्वर्ण मंदिर में सो रही है कि लगता है, पयोधरों पर से ओढ़नी के हट जाने की सुध भी उन्हें नहीं है। वेंकटेश के बाहों में मुरझाकर, स्वेद बिन्दुओं से सिक्त, अलमेल्मंगा मोतियों की सेज पर परवश मुद्रा में सो रही है।

* * *

९५

देवरवैतिविन्निटा देवुलायेनापै नीकु
आवल्लमिम्मिद्दरिनेमनि पोगडेमय्या ॥ देवरवैतिवि ॥

पुन्नमवेन्नेलजोडु पूवुललोनि वासन
उन्नतिमीरि नी उरमेक्केनु
मन्नन संपदराशि मदनुनि पुट्टिनिल्लु
वन्नेतो नीकु राणिवासमायेनु ॥ देवरवैतिवि ॥

पाज जलनिधि तेट बंगारु लोपलि कल
केलितमुगा नी केंगेलु पट्टेनु

मेलुलो साकारमु मिंचु लोकमु भाग्यमु
तालिमितो नीकु मूलधनमायेनु ।।देवरवैतिवि ।।

अंदरिनिगन्नतल्लि आदिमूलमैन लक्ष्मि
कंदुव नीमुंजेति कंकणमायेनु
इंदुनु श्रीवेंकटेश ईपे सर्वमोहनमु
कंदुवाये निन्नुगूडि कलिमेल्ला मेरसे ।। देवरवैतिवि ।।

श्री वेंकटेश तथा लक्ष्मी देवी की जोडी की सराहना की गयी है।

'हे स्वामी! तुम तो देवताओं के देवता हो। लक्ष्मीजी तुम्हारी पत्नी है। दोनों एक, दूसरे के लिए ही बने जैसे हैं। हे देव ! कितनी भी प्रशंसा करूँ, कम ही लगती है।

पूर्णिमा की दो-दो ज्योत्स्नाएँ जैसी हैं – लक्ष्मीजी! कुसुमों का परिमल भी वे हैं। ये दोनों एक ही समय पर आपके वक्षःस्थल पर बस गयी हैं। लक्ष्मीजी वैभवों की राशि है। कामदेव का पितृगृह ही समझो - तुम्हारा रानिवास हो गया है। क्षीरसागर की स्वच्छता तथा सुवर्ण की अंतर्निहित कांति, आपके अधीन में आ गयी हैं। आप उत्तमोत्तम गुणों की साकार मूर्ति हैं। सकल लोकों का सर्वोत्कृष्ट भाग्य – बडी ही निष्ठा से आपकी मूल-संपदा हो गयी है।

लोकमाता आदिमूल देवी आपका हाथ-फूल हो गयी है। इस तरह सर्वोच्च सुंदर देवी – लक्ष्मी, आपकी हो जाने के कारण आपका वैभव भी उज्ज्वल हो गया है।

* * *

९६

देवुनिकि देविकिनि तेप्पल कोनेरम्म
वेवेलु मोवकुलु लोकपावनि नीवम्मा ।। देवुनिकि

धर्मार्थ काम मोक्ष ततुलु नी सोपानालु
अर्मिदि नालुगु वेदालदे नीदरुलु
निर्मलपु नी जलमु निंडु सप्त सागरालु
कूर्ममु नी लोतु वो कोनेरम्म ॥ देवुनिकि॥

तगिन गंगादि तीर्थमुलु नी कडल्लु
जगति देवतलु नी जलजंतुलु
गगनपु पुण्य लोकालु नी दरि मेडलु
मोगि चुट्ट माकुलु मुनुलोयम्मा ॥ देवुनिकि ॥

वैंकुंठ नगरमु वाकिले नी याकारमु
चेकोनु पुण्यमुले नी जीव भावमु
ये कडनु श्रीवेंकटेशुडे नी उनिकि
दीकोनि नी तीर्थ माडितिमि काववम्मा ॥ देवुनिकि ॥

कलियुग वैकुंठ तिरुमल में विराजित जलाशय (जो 'स्वामि पुष्करिणी' के नाम से प्रसिद्ध है) की पवित्रता तथा प्रसिद्धता का वर्णन किया गया है।

हे लोक पावनी माँ! श्री वेंकटेश तथा अलमेल्मंगा-दंपति के नौकाविहार (प्लवोत्सव की क्रीडा) का केन्द्र तू ही है । तेरे चारों सोपान धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष हैं। चारों तीर हैं– ऋग्, यजु, साम तथा अथर्ववेद। निर्मल जल ही सातों महासागर हैं। तेरी सतह ही – आदिकूर्म अवतार है। गंगा आदि नदियाँ तेरी जलधियाँ हैं। तुझमें जीवित जीवजंतु ही देवी-देवताएँ हैं। पुष्करिणी मायी! तेरे चारों तरफ स्थित निवास, स्वर्ग में स्थित पुण्य लोक हैं और बडे-बडे वृक्ष मुनि बृंद हैं। तुम्हारा रूप तो वैकुंठ नगर का मुख्य द्वार है और तुम्हारा नित नूतन जीव-चैतन्य ही 'जीव-भाव' है और क्या कहें? तुम्हारा तिरुमल पर अस्तित्व ही श्रीवेंकटेश सन्निधि है। (गरुड देवता से वैकुंठ से लिवा लाकर तिरुमल में स्थापित इस पुष्करिणी

का स्नान मोक्षप्रद तथा इष्टार्थ सिद्धि-दायक कहा गया है।) इसीलिए मैं भी इसमें डुबकियाँ लगाने आया हूँ।

* * *

१७

षोडश कलानिधिकि षोडशोपचारमुलु
जाड तोड निच्चलुनु समर्पयामि ॥ षोडश ॥

अलरु विश्वात्मकुन कावाहन मिदे, सर्व
निलयुनकु आसनमु नेम्मिनिदे,
अल गंगाजनकुनकु, अर्घ्यपाद्याचमनालु,
जलधिशायिकिनि मज्जनमिदे ॥ षोडश ॥

वरपीतांबरुनकु वस्त्रालंकारमिदे
सरि श्रीमंतुनकु भूषणमुलिवे
धरणीधरुनकु गंधपुष्प धूममुलु
तिरमिदे कोटि सूर्य तेजुनकु दीपमु ॥ षोडश ॥

अमृतमथनुनकु नदिवो नैवेद्यमु
गमि चंद्रनेत्रुनकु कप्पुरविडेमु
अमरिन श्रीवेंकटाद्रि मीदि देवुनकु
तमितो प्रदक्षिणलु दंडमुलु निविगो ॥ षोडश ॥

षोडश कलाओं से शोभित स्वामी को षोडशोपचारों का निवेदन किया गया है।

विश्वाकार परमात्मा का आवाहन सर्वप्रथम किया गया है। सर्वजीवों में स्थित स्वामी को आसन, गंगाजनक (विष्णु) को अर्घ्य, पाद्य तथा आचमन, जलधिशायी को मज्जन सेवा – वे समर्पित करते हैं।

तदनंतर पीतांबरधारी को वस्त्रालंकार तथा श्रीनिधि को भूषण प्रदान करते हैं। इस धरती का भार ढ़ोनेवाले स्वामी को गंध, पुष्प तथा धूपबत्ती

चढ़ाते हैं। 'कोटि सूर्य तेजस्वी' को दीप चढ़ाते हैं। 'अमृतमंथनकारी' को नैवेद्य (भोग) समर्पित करते हैं तथा चंद्रलोचन को कपूर चढ़ाकर, तिरुमल में विराजमान सर्वेश श्री वेंकटेश को प्रदक्षिणा (फेरे) तथा प्रणाम करते हैं।

* * *

९८

येट्ट नेरिचितिवय्य इन्नि वाहनमुलेक्क
गटिगा निंपुके हरि कड्डु मेच्चेमय्या ॥ येट्ट ॥

गरुडुनि मीद नेक्कि गमनिंचितिवि नाडु
अरुदैन पारिजात हरणानकु
गरिमतो रथमेक्कि कदलितिवल्लनाडु
पोरदि ब्राह्मण पडुचुल नुद्धरिंचनु ॥ येट्ट ॥

चक्कगा कुबेरुनि पुष्पकमेक्कि कदलिति
मक्कुव सीतादेवि मरलिंचनु
तक्कक वायुजुनेक्कि दारिवेट्टितिवि नाडु
चोक्कपु वानरुल पौजुलु चूडनु ॥ येट्ट ॥

कोट्टनग नीवु रातिगुर्रमु नेक्कि तोलिति
वट्टियेड नधर्ममु नडचगनु
मेट्टक श्रीवेंकटाद्रि मीद बल्लकि येक्किति
विट्टे इंदिर गूडि येगु बेंड्लि येगनु ॥येट्ट ॥

विविध वाहनों पर सवार होने की श्री वेंकटेश की चतुरता को दिखाया गया है।

'कहाँ से इस दक्षता को पाया, तुमने हे स्वामी? आपकी भूरि-भूरि स्तुति हम सदा करेंगे!'

पारिजात वृक्ष का अपरहण करने गरुड वाहन पर तुम निकले थे। ब्राह्मण बालिकाओं का उद्धार करने के लिए निकल पडे थे – रथारूढ़

होकर। सीताजी के साथ अयोध्या लौटने के लिए पुष्पक विमान को चुना तुमने! वानर सेना के गठन को परखने के लिए तथा दानवाली पर युद्ध करने के लिए वायु-पुत्र हनुमान की भुजाओं पर बैठकर निकल पडे थे। शिलाश्व पर चढ़कर निकले थे – अधर्म का नाश करने और आज लक्ष्मी के साथ पालकी में निकल पडे हो – अपने विवाहोत्सव में! कितने चतुर हो हे स्वामी!

* * *

९९

अमरांगन लदे आडेरु
प्रमदंबुन नदे पाडेरु ॥अमरांगन ॥

गरुड वाहनुडु कनक रथमुपै
इरवुग वीधुल नेगेनि
सुरलुनु मुनुलुनु सोंपुग मोकुलु
तेरलिचि तेरलिचि तीसेरु ॥अमरांगन ॥

इलधरुडदिवो इंद्ररथमुपै
केलयुचु दिक्कुल गेलिचीनि
बलु शेषादुलु ब्रह्म शिवादुलु
चेलगि सेवलटु सेसेरु ॥अमरांगन ॥

अलमेल्मंग तो नटु श्रीवेंकट
निलयु डरदमुन नेगेडेनि
नलुगड मुक्तुलु नारदादुलुनु
पोलुपु मीर कड्डु पोगडेरु ॥अमरांगन ॥

अलमेल्मंगा के साथ तिरुमल की वीथियों में कलियुग स्वामी श्रीवेंकटेश की रथ-यात्रा का वर्णन किया गया है।

इस अद्भुत दृश्य का आविष्कार - शब्दों के द्वारा करते हुए वे कहते हैं – अमरकांताएँ, श्रीवेंकटेश के रथ को देखकर, सानंद स्वागत गीतिकाएँ

गा रही हैं। गरुडवाहन के आदी स्वामी, अब अपनी पत्नी के साथ, अपनी भक्त-कोटि को दर्शन देने के लिए, मंदिर से निकल पडे हैं – सुवर्ण रथ पर स्वामी की जयजयकार करते हुए, रथ के आगे चलनेवाले मुनि-जन और सुर-समूह, रथ के गमन को नियंत्रण में रखने के लिए, रथ के चक्रों में रखी जानेवाली छोटी-छोटी लकडियों की टुकडों को संभाल रहे हैं, ताकि अत्युत्साह में स्वामी रथ को अतिवेग से चलायें, तोभी उन्हें कुछ बाधा न पहुँचे।

इस संसार का वहन करनेवाले स्वामी, सुसज्जित रथ पर सवार होकर, दिशांचलों तक भी जा पहुँच रहे हैं। यह उनकी अपार भक्त-वत्सलता है। शेषनाग, ब्रह्मदेव, शिवादि देवी-देवताएँ उनकी सेवा में लगे हुए हैं। श्रीसती के साथ श्रीवेंकटेश को रथ पर देखकर, चारों तरफ खडे मुनिपुंगव, नारदादि योगीबृंद उनकी संस्तुति कर रहे हैं। इस तरह परमात्मा का यह रथ-विहार नेत्रानंद प्रदान कर रहा है।

* * *

१००

सकल लोकेश्वरुलु सरुस चेकोनुवाडु
अकलंकमुग पुष्प यागंबुलु **सकल।**

विविध मंत्रमुलतो वेदघोषमुलतो
आवल तिरुवामुडियु अंगनल आटतो
कवि वंदिनुतुलतो कम्म पूजलतोड
नवधरिंची पुष्पयागंबु **सकल।**

कप्पुरपुटारतुल घनचंदनमुतोड
तेप्पल धूपमुल तिरुवंदि कापुतो
ओप्पुग पण्यारमुलु वोगि पेक्कु वगलतो
अप्पडंदी पुष्पयागंबु **सकल।।**

तगु छत्र चामर तांबूलमुल तोड
पगटुतो नीरीति पदि पूजलंदुकोनि
जिगि मीरे चूडरे श्री वेंकटेश्वरुनि
अगणितंबगु पुष्प यागंबु ।। सकल ।।

कार्तिक मास के श्रवण नक्षत्र युक्त तिथि में श्री वेंकटेश्वर की सन्निधि में 'पुष्पयाग' का आयोजन किया जाता है। विविध वर्णो तथा परिमलों के पुष्पों से अलंकृत स्वामी, छत्र-चामरादि सेवाओं को स्वीकारते हैं। नयनानंदकारक उस वेला का वर्णन किया गया है।

सकल लोकों के नेता श्री वेंकटेश पुष्पयाग का अनादि गौरव पा रहे हैं देखो! विविध मंत्र, वेदोच्चारण, नम्माल्वार की रचना 'तिरुवायमोळि', कविगणों की स्तुतियाँ तथा विविध पूजादिकों के बीच, स्वामी का 'पुष्पयाग' संपन्न हो रहा है।

कपूर की आरतियाँ, चंदन, परिमल-धूप युक्त 'तिरुवंदि-कापु' (स्वामी के सामने दीपों को दोलित करना) विविध मीठे पकवानों के बीच स्वामी बडे ही शान से 'पुष्पयाग' का आनंद उठा रहे हैं।

छत्र, चामर, तांबूल सहित विविध पूजाओं का ग्रहण करते हुए स्वामी इस मनोहारी पुष्पयाग में अधिकाधिक 'अग्रगण्य' दिखायी दे रहे हैं।

* * *

१०१

नीवेका चेप्पजूप नीवे नीवेका
श्रीविभु प्रतिनिधिवि सेन मोदलारि ।। नीवेका ।।

नीवेका कट्टेदुर निलुचुंडि हरिवद्द
देवतलगनिपिंचे देवुडवु

येवंक विच्चेसिनानु इंदिरापतिकि निज
सेवकुडवु नीवेका सेन मोदलारि || नीवेका ||

पसिडिवद्दलवारु पदिगोट्ट गोलुव
देसल बंपुलु वंपे धीरुडवु
वसमुगा मुज्जगालवारि निंदरिनि नी
सिसुवुलुगा नेलिन सेन मोदलारि || नीवेका ||

दोरलैनयसुरुल दुत्तुमुरू सेसि जग
मिरवुगा नेलितिवेकराज्यमै
परगु सूत्रवतिपतिवै वेंकटविभु
सिरुल पेन्निधि नीवे सेन मोदलारि || नीवेका ||

विशिष्टाद्वैत सिद्धांत का अनुसरण करते हुए श्री वेंकटेश के सेनाधिपति – 'विष्वक्सेन' का गुणगान किया गया है।

हे स्वामी! हे सेनानायक! स्वामी के प्रमुख सेवक तुम्हीं हो न?

श्रीहरि के सामने खडे होकर, सकल देवी-देवताओं को स्वामी के दर्शन की अनुमति तुम ही देते हो न? किसी भी तरह परखा जाय, लक्ष्मीपति के निज-सेवक तथा सच्चे सेवक तुम ही हो!

सोने की छडियों को धरे हुए हजारों विनयशील सेवकों के स्वामी! सभी दिशाओं को आदेश देनेवाले हे स्वामी! इन तीनों लोकों की जनता को अपनी ही संतति की तरह पाल रहे हो।

अपने सहज पराक्रम से, असुर राजाओं को छिन्न-भिन्न कर इस सारे जग का, एक ही राज्य की तरह, पालन करनेवाले हे सूत्रवतीवल्लभ! आप तो श्री वेंकटेश की अपूर्व संपदा हो!

* * *

१०२

ओ पवनात्मज ओघनुड
बापु बापनग बरगितिगा ॥ ओ ॥

वो हनुमंतुड उदयाचल नि
र्वाहक निजसर्व प्रबल
देहमु मोचिन तेगुवकु निटुवले
साहसमिटुवले जाटितिगा ॥ ओ ॥

वो रवि ग्रहण वो दनुजांतक
मारुलेक मति मलसितिगा
दारुणपु विनतातनयादुलु
गारविंप निटु गलिगितिगा ॥ ओ ॥

वो दशमुख हर वो वेंकटपति
पादसरोरुह पालकुडा
यी देहमुतो निन्निलोकमुलु
नी देहमेक्क निलिचितिगा ॥ ॥ ओ ॥

अनिल-पुत्र का गुणगान तथा उनके शौर्यपराक्रम का योग्य-रीति में आविष्कार किया गया है।

हे हनुमान! आप उदयाचल तक पहुँच सकते हो। अपने निज-बल से प्रबल बने हो। धीरता तथा शूरता के प्रमाण देने के लिए ही आपने अपने शरीर का विस्तृत विस्तार किया।

रवि को भी ग्रसित कर सकनेवाले हे पवनात्मज! हे असुरांतक! अतुलनीय है आपका ज्ञान! गरुडादि आपका सम्मान करते हैं। हे दशमुखारि! आप वेंकटपति के चरण कमलों के सेवक हो, जिनमें सकल लोक समाये हुए हैं। हे स्वामी, जब आप पर (ब्रह्मोत्सव वेला में) श्री

वेंकटेश चढ़ जाते हैं, तब भी आप स्थिर हो, खडे ही रहते हैं। आपका मंगल हो।

* * *

१०३

वीडुगदे शेषुडु वेंकटाद्रि शेषुडु
वेडुक गरुडुनितो पेन्नुदैन शेषुडु ॥ वीडु ॥

वेयि पडिगेल तोड वेलसिन शेषुडु
चायमेनि तलुकु वज्राल शेषुडु
मायनि सिरसुलपै माणिकाल शेषुडु
येयेड हरिकि नीडै येगेटि शेषुडु ॥ वीडु ॥

पट्टपु वाहनमैन बंगारू शेषुडु
चुट्टु चुट्टकोनिन मिंचुल शेषुडु
नट्टकोन्न रेंडुवेलु नालुकल शेषुडु
नेट्टन हरिबोगड नेरुपरि शेषुडु ॥ वीडु ॥

कदिसि पनुलकेल्ल गाचुकोन्न शेषुडु
मोदल देवतलेल्ला मोक्के शेषुडु
अदे श्री वेंकटपतिकलिमेलु मंगकुनु
पदरक येपोद्दू पानुपैन शेषुडु ॥ वीडु ॥

श्रीवेंकटपति की शय्या आदिशेष का स्तवन किया गया है।

इस भुजंगेश के सहस्र फण हैं। इसका शरीर मानिकों की कांति से उज्वल है। इस शेषाद्रि के सारे फणों पर अमूल्य माणिक्य जडे हुए हैं। हर पल, छाया की तरह स्वामी के साथ ही रहनेवाले ये आदिशेष हैं।

श्री वेंकटेश का राजसी वाहन – यह स्वर्णिम शेष, अनेकानेक वृत्तों में कुण्डलित हो, अपनी सहस्रों जिह्वाओं से हरि का सदा कीर्तिगान करता रहता है।

अपनी विधियों को निभाने में सदा तत्पर रहनेवाला तथा देवी-देवताओं से सर्वप्रथम पूजित होनेवाला यह फणीन्द्र, सर्वदा अलमेल्मंगा तथा वेंकटपति की शय्या बना रहता है।

* * *

१०४

इट्टु गरुडनि नीवेक्किननु
पट पट दिक्कुलु बग्गनि पगिले ॥ इट्टु ॥

येगसिन गरुडनि येपुग धा यनि
जिगि दोलक चबुकु चेसिननु
निगमांतंबुलु निगम संघमुलु
गगनमु जगमुलु गड गड वडके ॥ इट्टु ॥

बिरुसुग गरुडनि पेरेमु दोलुचु
बेरसि नीवु गोपिंचिननु
सरस नखिलमुलु जर्जरितमुलै
तिरुपुन नलुगड दिरदिर दिरिगे ॥ इट्टु ॥

पल्लिंचिन नी पसिडि गरुडनिनि
केल्लुन नीवेक्किनयपुडु
झल्लने राक्षस समिति नी महिम
वेल्लि मुनु गुदुरु वेंकटरमणा ॥ इट्टु ॥

श्री वेंकटपति के गरुड-वाहन का यशोगान किया गया है।

'हे वेंकटरमण! जब आप गरुड-वाहन पर चढ़ जाते हैं, तो उसी समय चारों दिशायें 'फट फट' शब्दों से विदीर्ण हो जाती हैं।

आपके चाबुक की ध्वनि तो हमें बधिर बना देती है। चकाचौंध कर देनेवाली कांति को बिखेरते हुए, गरुड वाहन जब ऊपर उठ जाता है, तो वेद, वेदान्त, गगन तथा सारे जग, थर-थर काँपते हैं!

अत्यंत कुपित हो, जब गरुड को विविध गति-विशेषों में चलाते हैं, तो सब लोक जर्जीरित हो जाते हैं। चक्रवात में फँसे जैसे अत्यंत वेग से घूमने लगते हैं।

जब आप कंठी सहित स्वर्ण-गरुड पर बैठ जाते हैं, तो दानव-वृंदों के प्राण-पखेरू, आपके शौर्य-प्रताप की कल्पना मात्र से ही उड जाते हैं।

* * *

१०५

नित्य पूजलिविवो नेरिचिन नोहो
प्रत्यक्षमैनट्टि परमात्मुनिकि ॥ नित्य ॥

तनुवे गुडियट तलये शिखरमट
पेनु हृदयमे हरि पीठमट
कनुगोन चूपुले घन दीपमुलट
तन लोपलि अंतर्यामिकिनि ॥ नित्य ॥

पलुके मंत्रमट पादैन नालिके
कलकलमनु पिडि घंट यट
नलुवैन रुचुले नैवेद्यमुलट
तलपु लोपलनुन्न दैवमुनकु ॥ नित्य ॥

गमनचेष्टले अंतरंग गतियट
तमिगल जीवुडे दासुडट
अमरिन ऊर्पुले आलवट्टमुलट
क्रममुतो श्री वेंकटरायनिकि ॥ नित्य ॥

भगवान वेंकटेश की पूजा-साम्रगी का विवरण प्रस्तुत किया गया है। इस शरीर के अंग ही उनकी नित्य-पूजा के उपकरण हैं।

यह शरीर ही मंदिर है। सर, शिखर है। हृदय तो हरि का सिंहासन है। शरीर में रहनेवाले अंतर्यामी के लिए आँखों की दृष्टि ही घन-दीप है।

वाक् ही मंत्र है। सुघटित रसना ही बडी घंटी है। हमारी भावनाओं में स्थित स्वामी के लिए, विविध स्वाद ही नैवेद्य है।

चरणों का चलन ही भगवान की शोभा-यात्रा है। भगवान की सेवा के लिए उत्सुक जीव है – उसका दास।

जीव के उच्छ्वास-निश्वास ही भगवान के व्यजन है।

मानसिक पूजा की विधा का विवरण मर्मस्पर्शी रीति में प्रस्तुत है।

* * *

१०६

अंगनलीरे यारतुलु
अंगजगुरुनकु नारतुलू ॥ अंगनलीरे ॥

श्री देवी तोड्डुत जेलगुचु नव्वे
आदिम पुरुषुनि कारतुलू
मेदिनी रमणि मेलमुलाडेटि
आदिव्य तेजुन कारतुलू ॥ अंगनलीरे ॥

सुरलकु अमृतमु सोरिदि नोसंगिन
हरिकिदिवो पसिडारतुलू
तरिमिदि दुष्टुल दनुजुल नडचिन
अनिभयंकरुन कारतुलू ॥ अंगनलीरे ॥

निच्चलु कल्याण निधियै येगोटि
अच्युतुनकु निवे यारतुलू
चोच्चि श्री वेंकटेशुड्डु नलमेल्मंग
यच्चुग निलिचिरि यारतुलू ॥ अंगनलीरे ॥

अलमेल्मंगा समेत श्री वेंकटेश की जोडी की आरती उतार रहे हैं।

श्रीदेवी के साथ मंदहास कर रहे आदिपुरुष की आरती उतारो। भूदेवी (मेदिनी रमणि) के साथ हास-परिहास करते बैठे, आदित्य कांतिवाले स्वामी की आरती उतारो।

देव दानवों के समुद्र-मंथन के बाद, देवताओं को अमृत दिलाये हुए दानवारि स्वामी को आरती उतारने को वे कह रहे हैं। नित्य कल्याण मूर्ति के रूप में अलमेल्मंगा समेत स्थित उस अच्युत की आरती आप उतारो!

. *

१०७

अलरजंचलमैन आत्मलंदुंड नी
यलवाटु सेसे नी उय्याला
पलुमारु उच्छासपवनमंदुंडनी
भावंबु देलिपे नी उय्याला ॥ उय्याला ॥

उदयास्तशैलंबु लोनरंगभमुलैन
उडुमंडलमु मोचे उय्याला
अदन नाकाशपद मड्डूंलंबैन
अखिलंबु निंडे नी उय्याला
पदिलमुग वेदमुल बंगारु चेरुलै
पट्टवेरपै तोचे नुय्याला
वदलकिटु धर्मदेवतपीठमै मिगुल
वर्णिंप नरुदाय नुय्याला ॥ उय्याला ॥

मेलुकट्लै मीकु मेघमंडलमेल्ल
मेरुगुनकु मेरुगाये नुय्याला
नीलशैलमुवंटि नीमेनु कांतिकिनि
निजमैन तोडवाय नुय्याला
पालिंड्लु गदलगा पय्येदलु रापाड

भामिनुलु वडि नूचु नुय्याला
वोलि ब्रह्मांडंबु वोरगुनोयनु भीति
नोय्य नोरयननूचिरुय्याला ॥ उय्याला ॥

कमलकुनु भूसतिकि कदलु कदलुकु मिम्मु
कौगिलिंपगजेसे नुय्याला
अमरांगनलकुनी हावभावविलास
मंदंद जूपे नी उय्याला
कमलासनादुलकु कन्नुलकु पंडुगै
गणुतिंप नरुदाय नुय्याला
कमनीयमूर्ति वेंकटशैलपति नीकु
कडुवेडुकैवुंडे नुय्याला ॥ उय्याला ॥

विविध परिमल सुमनों से अलंकृत झूले में श्री-भू रमणियों समेत तिरुमलेश को झुलाने के उत्सव को ऊंजल सेवा कहते हैं। उन पावन क्षणों में, उस दिव्य दंपति के अनुपमेय वैभव का दर्शन कर पाना, मानव जीवन का सर्वोच्च भाग्य मानते हैं – भक्तजन! यह अन्नमाचार्य का अहोभाग्य है कि तिरुमल स्वामी के प्रत्येक उत्सव में, अत्यंत समीपस्थ भाग लेते हुए, उस दिव्य मंगल स्वामी की सेवा करने का अवसर उन्हें प्राप्त हुआ है। इसे कोटि-कोटि जन्मों का संचित पुण्य कहा जा सकता है। इस गीत में अन्नमाचार्य उसी ऊंजल-सेवा का वर्णन कर रहे हैं।

वे कह रहे हैं – कितना सुंदर झूला है यह। इसने हर चंचल आत्मा में इसी तरह विश्राम करते रहने का अभ्यास, स्वामी को कर दिया है। इस झूले में झूलते हुए स्वामी को देखते हुए लग रहा है – शायद जीवों के उच्छ्वास-निश्वासों में भी स्वामी इसी तरह झूलते रहते हैं।

यह झूला सूर्योदय तथा सूर्यास्त के भार को ढ़ोते शिखरों के आधार पर कांतिमय उडुमंडल को ढ़ो रहा है ! सारे विश्व को नभोमंडल रूपी

सपाट-खंभे के आधार पर, यह ढ़ो रहा है। वेद इसके स्वर्णमय रज्जु हैं। इस कारण इसमें किंचित् अतिशय-सा दिखायी दे रहा है। धर्म की देवी के सिंहासन-सा, इस झूले की सुंदरता वर्णनातीत है।

जलद (इस पर चढ़ने के) सोपान हैं। हे स्वामी! आपका शरीर तो नील शैल-सा कंतिमय है। यह झूला आपके सुशोभित शरीर के लिए अत्यंत उचित आभूषण है! सुंदर स्त्रियाँ इसे झुला रही हैं। इस क्रिया-कलाप में उनके उन्नत-पयोधर हिल रहे हैं। एतत् कारण उनकी ओढ़नियाँ भी हिल रही हैं। यह दृश्य अति मनोहर है। हाँ, इस झूले को झुलाने में वे बडी ही सावधानी बरत रही हैं। उन्हें शायद डर है कि अगर वे तेजी से झूले को झुलायें, तो ब्रह्माण्ड कहीं लुढ़क जायें, तो क्या करें। इसी कारण से वे रमणियाँ धीमी गति से झूले को झुला रही हैं।

स्वामी के दोनों तरफ, श्री-भू देवियाँ आसीन हैं। उन्हें बारंबार स्वामी के आलिंगन सुख को प्रदान कर रही है – यह झूला! झूले में झूलने के समय स्वामी के हाव-भाव विलास, 'क्षणे क्षणे यन्नवत मुपैति' भी है। इन्हें देखने का सौभाग्य अमरंगानाओं को प्रदान कर रहा है– यह झूला! ब्रह्मादि देवताओं को भी वर्णनातीत नयन-सुख प्रदान करते हुए, वेंकट शैलपति के मनोल्लास का माध्यम सा हो गया है, यह झूला! कितनी सुंदर कल्पना है न?

अन्नमाचार्य के अतुलनीय रचना चातुर्य का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है।

* * *

१०८

मरलि मरलि जयमंगलम्
सोरदि निच्चलुनु शुभमंगलम् **॥ मरलि ॥**

कलमा रमणिकि कलमाक्षुनकुनु
ममतल जय जय मगलम्

अमरजननिकि अमरवंद्युनकु
सुमुहूर्तमुतो शुभमंगलम् ॥ मरलि ॥

जलधि कन्यकुनु जलधि शायिकिनि
मलयुचुनु शुभ मंगलम्
कलिमिकांतकाकलिकि विभुनिकिनि
सुलुवुल यारति मंगलम् ॥ मललि ॥

चित्तजु तल्लिकि श्री वेंकटपतिकि
मत्तिल्लिन जय मंगलम्
इन्तल नत्तल इरुवुर कौगिलि
जोत्तुल रतुलकु शुभमंगलम् ॥ मरलि ॥

अन्नमाचार्य इस गीत में लक्ष्मी सहित श्री वेंकटेश की मुहुर्मुह मंगलकामना कर रहे हैं।

कमल में निवास करनेवाली रमणी तथा कमलनयन स्वामी को ममता-भरी कल्याण-कामना है। अमरजननी एवं देवी-देवताओं के स्तुति-पात्र देवदेव को इस शुभवेला में शुभमंगल है।

जलधिसुता को तथा जलधिशायी को वैभवों की देवी एवं उनके प्राणेश को दीपकांतियों सहित मंगल आरती है।

कामदेव की जननी तथा श्री वेंकटपति दंपति को आराधना की परवशता में, अन्नमाचार्य कुशल-मंगल की कामना कर रहे हैं। इस देव-दंपति के प्रेमालिंगन में अमर तथा अविरल रति-केली की मंगल कामनायें की गयी हैं।

अनुक्रमणिका

T.T.D. Religious Publications Series No. 772
Price Rs.

Published by Sri K.V. Ramanachary, I.A.S., Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams and Printed at T.T.D. Press, Tirupati.

प्रस्तुत अध्ययन तो अन्नमाचार्य और सूरदास की रचनाओं तक ही सीमित है, अतः अन्नमाचार्य के अन्य संप्रदायों से हुए प्रभावगत संबंध की अपेक्षा, वल्लभ संप्रदाय से हुए संबंध का अधिक स्पष्ट चित्र मिलता है। पहले हम बता चुके हैं कि आचार्य वल्लभ की तीनों भूप्रदक्षिण यात्राओं में तिरुपति में उनकी बैठकें लगी थीं। आचार्य जी की पहली यात्रा अन्नमाचार्य के जीवन काल में ही गुजरी थी। स्वयं तेलुगुवाले होने से आचार्यप्रभु को अन्नमाचार्य के पदों व संकीर्तन-संप्रदाय का प्रत्यक्ष परिचय मिला होगा। अन्यत्र हम यह भी दिखा चुके हैं कि तिरुमल-तिरुपति के मंदिर के सेवा-क्रम और वल्लभ संप्रदाय के मंदिरों के सेवा-क्रम में बड़ा साम्य है। दक्षिण के अन्य वैष्णवालयों की तुलना में तिरुमल-तिरुपति के मंदिर में जो विशिष्ट सेबा-क्रम चलता आया है, उसीको वल्लभ संप्रदाय के मंदिरों में भी बहुधा उसी रूप में चलते देखकर और संकीर्तन-सेवा की परिपाटी को चलाने में वल्लभाचार्य जी के उत्साह को देखकर कोई भी इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि तिरुपति क्षेत्र के सेवा-क्रम व अन्नमाचार्य के संकीर्तन-संप्रदाय का पूरा पूरा परिचय आचार्य जी को था और कुछ हद तक वे इनसे प्रभावित भी हुए थे। उसी तरह अन्य विशिष्टाद्वैती आचार्यों की अपेक्षा अन्नमाचार्य और उनके पूत्र-पौत्रों में भागवत पुराण के प्रति अधिक आदर विद्यमान होता है। अन्नमाचार्य के पदों वाले ताम्र-पत्रों की अवतारिका में उनके निधन की सूचना 'निरोध' शब्द से दी गयी है, जो रामानुज मत की अपेक्षा वल्लभ मत में अधिक समादृत सांकेतिक शब्द है और जिसका निर्वचन भागबत में ही सबसे पहले दिया गया है। उस समय में हंपीविजयनगर में प्रचलित माध्व-वैष्णव भक्ति-संप्रदायों व श्रीपाद-राय, व्यासराय जैसे मध्व आचार्यों के परिचय व संपर्क भी अन्नमाचार्य और वल्लभाचार्य को समान रूप से मिले थे। ये सब परस्पर आदान-प्रदान की ओर संकेत करनेवाले तथ्य हैं।

इस संदर्भ में लीलाशुक बिल्वमंगल की भक्ति-पद्धति और अन्नमाचार्य एवं वल्लभाचार्य तथा वल्लभ के द्वारा सूरदास तक परिव्याप्त होकर मिलनेवाले उसके प्रभाव को भी भूलना नहीं चाहिए। पहले हम इस विषय की ओर पर्याप्त निर्देश कर चुके हैं। यह आलोच्य कवियों को एक दूसरे के निकट लानेवाला प्रभावगत संबंध है, जो दक्षिण और उत्तर के भक्ति संप्रदायों के बीच का पुल जैसा जान पड़ता है।

आनुषंगिक रूप से इस अध्ययन का फल यह भी हुआ कि अन्नमाचार्य के साहित्य का विभिन्न दृष्टिकोणों से अध्ययन और उसका विस्तृत परिचय पहली बार अभी हो पाया है। सूर साहित्य का जितना मौलिक तथा विस्तृत अध्ययन व मूल्यांकन हिन्दी में हुआ, उसमें से शतांश क्या, सहस्रांश भी अन्नमाचार्य-साहित्य को लेकर तेलुगु में इसके पहले नहीं हो पाया। अन्नमाचार्य की जीवनी को छोड़कर बाकी सभी बातों में जो कुछ अध्ययन व निष्कर्ष किये गये हैं, वे सब मेरे मौलिक परिश्रम के ही उपज हैं और उन बातों को उस रूप में व्यक्त करने का पहला प्रयत्न भी मेरा ही है। अतः आशा है कि इस अध्ययन से, हिन्दी के माध्यम से ही सही, तेलुगु भाषा के एक महान् भक्त-कवि के साहित्य पर भरसक प्रकाश जो डाला गया है. उससे तेलुगु साहित्य को भी यथेष्ट लाभ पहुंचे। फिर, हिन्दीतर साहित्य के महान भक्त-कवि के परिपार्श्व में अध्ययन करने से हिन्दी के सर्वश्रेष्ट भक्तकवि सूरदास के महत्व की भी और अधिक जानकारी प्राप्त होने की आशा तो है ही।

प्रस्तुत अध्ययन तो अन्नमाचार्य और सूरदास की रचनाओं तक ही सीमित है, अतः अन्नमाचार्य के अन्य संप्रदायों से हुए प्रभावगत संबंध की अपेक्षा, वल्लभ संप्रदाय से हुए संबंध का अधिक स्पष्ट चित्र मिलता है। पहले हम बता चुके हैं कि आचार्य वल्लभ की तीनों भूप्रदक्षिण यात्राओं में तिरुपति में उनकी बैठकें लगी थीं। आचार्य जी की पहली यात्रा अन्नमाचार्य के जीवन काल में ही गुजरी थी। स्वयं तेलुगुवाले होने से आचार्यप्रभु को अन्नमाचार्य के पदों व संकीर्तन-संप्रदाय का प्रत्यक्ष परिचय मिला होगा। अन्यत्र हम यह भी दिखा चुके हैं कि तिरुमल-तिरुपति के मंदिर के सेवा-क्रम और वल्लभ संप्रदाय के मंदिरों के सेवा-क्रम में बड़ा साम्य है। दक्षिण के अन्य वैष्णवालयों की तुलना में तिरुमल-तिरुपति के मंदिर में जो विशिष्ट सेवा-क्रम चलता आया है, उसीको वल्लभ संप्रदाय के मंदिरों में भी बहुधा उसी रूप में चलते देखकर और संकीर्तन-सेवा की परिपाटी को चलाने में वल्लभाचार्य जी के उत्साह को देखकर कोई भी इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि तिरुपति क्षेत्र के सेवा-क्रम व अन्नमाचार्य के संकीर्तन-संप्रदाय का पूरा पूरा परिचय आचार्य जी को था और कुछ हद तक वे इनसे प्रभावित भी हुए थे। उसी तरह अन्य विशिष्टाद्वैती आचार्यों की अपेक्षा अन्नमाचार्य और उनके पुत्र-पौत्रों में भागवत पुराण के प्रति अधिक आदर विद्यमान होता है। अन्नमाचार्य के पदों वाले ताम्र-पत्रों की अवतारिका में उनके निधन की सूचना 'निरोध' शब्द से दी गयी है, जो रामानुज मत की अपेक्षा वल्लभ मत में अधिक समादृत सांकेतिक शब्द है और जिसका निर्वचन भागवत में ही सबसे पहले दिया गया है। उस समय में हंपीविजयनगर में प्रचलित माध्व-वैष्णव भक्ति-संप्रदायों व श्रीपाद-राय, व्यासराय जैसे मध्व आचार्यों के परिचय व संपर्क भी अन्नमाचार्य और वल्लभाचार्य को समान रूप से मिले थे। ये सब परस्पर आदान-प्रदान की ओर संकेत करनेवाले तथ्य हैं।

इस संदर्भ में लीलाशुक बिल्वमंगल की भक्ति-पद्धति और अन्नमाचार्य एवं वल्लभाचार्य तथा वल्लभ के द्वारा सूरदास तक परिव्याप्त होकर मिलनेवाले उसके प्रभाव को भी भूलना नहीं चाहिए। पहले हम इस विषय की ओर पर्याप्त निर्देश कर चुके हैं। यह आलोच्य कवियों को एक दूसरे के निकट लानेवाला प्रभावगत संबंध है, जो दक्षिण और उत्तर के भक्ति संप्रदायों के बीच का पुल जैसा जान पड़ता है।

आनुषंगिक रूप से इस अध्ययन का फल यह भी हुआ कि अन्नमाचार्य के साहित्य का विभिन्न दृष्टिकोणों से अध्ययन और उसका विस्तृत परिचय पहली बार अभी हो पाया है। सूर साहित्य का जितना मौलिक तथा विस्तृत अध्ययन व मूल्यांकन हिन्दी में हुआ, उसमें से शतांश क्या, सहस्रांश भी अन्नमाचार्य-साहित्य को लेकर तेलुगु में इसके पहले नहीं हो पाया। अन्नमाचार्य की जीवनी को छोड़कर बाकी सभी बातों में जो कुछ अध्ययन व निष्कर्ष किये गये हैं, वे सब मेरे मौलिक परिश्रम के ही उपज हैं और उन बातों को उस रूप में व्यक्त करने का पहला प्रयत्न भी मेरा ही है। अतः आशा है कि इस अध्ययन से, हिन्दी के माध्यम से ही सही, तेलुगु भाषा के एक महान् भक्त-कवि के साहित्य पर भरसक प्रकाश जो डाला गया है. उससे तेलुगु साहित्य को भी यथेष्ट लाभ पहुंचे। फिर, हिन्दीतर साहित्य के महान भक्त-कवि के परिपार्श्व में अध्ययन करने से हिन्दी के सर्वश्रेष्ट भक्तकवि सूरदास के महत्व की भी और अधिक जानकारी प्राप्त होने की आशा तो है ही।

अनुबंध १

अन्नमाचार्य की वंशावली
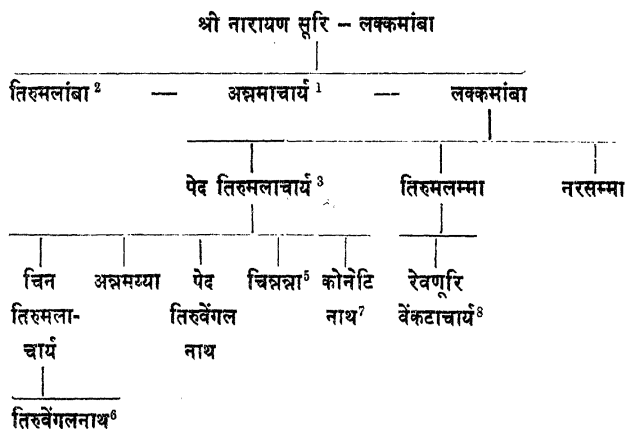
1. अन्नमाचार्य :– (संकीर्तनाचार्य) उपनाम अन्नमय्या ।

2, तिरुमलम्मा :– उपनाम तिक्कम्मा, सुभद्रा परिणय की कवयित्री ।

3. पेद तिरुमलाचार्य :– अध्यात्म और शृंगार संकीर्तनों के अलावा इन्होंने वैराग्य वचन मालिकागीत, शृंगार दंडक, शृंगार वृत्त मालिका शतक, वेंकटेश्वरोदाहरण, नीति सीस शतक, सुदर्शन रगडा, चक्रवालमंजरी, रेफ रकार निर्णय, आंध्रवेदांत और हरिवंश पुराण रचे । हरिवंश पुराण को छोड़कर बाकी सभी कृतियां मिलती हैं ।

4. चिन तिरुमलाचार्य :– (संकीर्तन कर्ता) संकीर्तनों के अलावा इनके अष्टभाषा दंडक और संकीर्तन लक्षण का आंध्रपद्यानुवाद मिलते हैं ।

5. चिन तिरुवेंगलनाथ :– उपनाम चिन्नन्ना–अन्नमाचार्य चरित्र के अलावा इनके उषापरिणय, परमयोगिविलास और अष्टमहिषी कल्याण काव्य मिलते हैं ।

6. तिरुवेंगलनाथ :– आंध्रअमरुक के अलावा इन्होंने संस्कृत में काव्य प्रकाश की सुधानिधि नामक व्याख्या लिखी ।

7. कोनेटिनाथ :– अमर कृत नामलिंगानुशासन की इन्होंने गुरुबाल प्रबोधिका नामक व्याख्या रची ।

8. रेवणूरि वेंकटाचार्य :– श्रीपादरेणु माहात्म्य और शकुंतला परिणय रचे ।

वि. सू. बाकी लोगों की कृतियां नहीं मिलतीं, लेकिन उनकी गान-विद्या की प्रशस्ति अन्यत्र मिलती है ।

अनुबंध २

सहायक ग्रंथों की सूची

१. अनुसंधान और आलोचना	डा. नगेंद्र, दिल्ली
२. अन्नमाचार्य पदावली	श्री एम. संगमेशम् तिरुपति
३. अष्टछाप	डा. धीरेंद्र वर्मा, एम. ए., डी. लिट् १९३९
४. अष्टछाप और वल्लभ संप्रदाय	डा. दीनदयाल गुप्त, सम्मेलन, प्रयाग
५. अष्टछाप परिचय	श्री प्रभुदयाल मीतल, अग्रवाल प्रेस, मथुरा
६. आलवार भक्तों का तमिल प्रबंधम् और हिन्दी कृष्ण-काव्य	डा. मालिक मुहम्मद, विनोद पुस्तक मंदिर, आग्रा, १९६४
७. आलोचनात्मक हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा. रामकुमार वर्मा, इलहाबाद, १९५८
८. कबीर का रहस्यवाद	,, ,,
९. कृत्तिवासी बंगला रामायण और रामचरित मानस का तुलनात्मक अध्ययन	डा. रामनाथ त्रिपाठी
१०. कृष्ण-काव्य में भ्रमरगीत	डा. श्यामसुंदर लाल दीक्षित, आग्रा, १९५८
११. कृष्ण-भक्ति-काव्य में सखीभाव	गोस्वामी शरण बिहारी, वारणासी, १९६६
१२. गीता रहस्य	पं. बालगंगाधर तिलक
१३. छायावाद और रहस्यवाद	श्री गंगाप्रसाद पांडेय
१४. भक्ति का विकास	डा. मुंशीराम शर्मा, चौखंबा, १९५८
१५. भक्ति-काव्य के मूल स्रोत	श्री दुर्गाशंकर मिश्र, नवयुग ग्रंथागार, लखनऊ, १९५८
१६. भागवत संप्रदाय	डा. बलदेव उपाध्याय, काशी
१७. भारतीय दर्शन	,, ,,

१८. भारतीय दर्शन	वाचस्पति गैरोला
१९. भ्रमरगीत और सूर	डा. जैनेंद्रकुमार, ग्रंथम, कानपूर, १९६७
२०. मध्यकालीन धर्म साधना	डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी, साहित्य भवन, इलहाबाद, १९६६
२१. मध्यकालीन भारत वर्ष का इतिहास	डा. ईश्वरीप्रसाद
२२. मध्यकालीन संत साहित्य	डा. रामखेलावन पांडेय, हिन्दी प्रचार पुस्तकालय, वारणासी, १९५५
२३. मध्यकालीन प्रेम साधना	डा. परशुराम चतुर्वेदी
२४. राधा का क्रम विकास	डा. शशिभूषण दासगुप्त, काशी, १९६५
२५. राधा-वल्लभ संप्रदाय, सिद्धांत और साहित्य	डा. विजयेंद्र स्नातक
२६. वल्लभ दिग्विजय	नाथद्वारा विद्याभवन, सं १९७५
२७. वैष्णव धर्म	डा. परशुराम चतुर्वेदी
२८. संस्कृति के चार अध्याय	डा. रामधारी सिंह दिनकर
२९. साहित्य दर्पण	सं शालग्राम शास्त्री, मातीलाल बनारसी दास, काशी, १९५६
३०. सिद्धांत और अध्ययन	डा. गुलाबराय, आत्माराम अंड सन्स् दिल्ली
३१. सूर और उनका साहित्य	डा. हरवंशलाल शर्मा, भारत प्रकाशन मंदिर, आलीगढ, सं २०१५
३२. सूरदास का काव्य वैभव	डा. मुंशीराम शर्मा, ग्रंथम्, कानपूर, १९६५
३३. सूर की झांकी	डा. सत्येंद्र, शिवलाल अग्रवाल, आग्रा १९५६
३४. सूरदास	डा. पीतांबरदास बडथ्वाल
३५. सूरदास	डा. ब्रजेश्वर वर्मा, प्रयाग, १९५०
३६. सूरदास	पं. रामचंद्र शुक्ल, सरस्वती मंदिर, बनारस
३७. महाकवि सूरदास	आचार्य नंददुलारे वाजपेय, आत्माराम अंड सन्स्, दिल्ली, १९५२

३८. सूर साहित्य — डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य समिति, मध्यभारत, १९९३

३९. सूर सौरभ — डा. मुंशीराम शर्मा, कानपूर, सं २००२

४०. भारतीय साधना और सूरसाहित्य — ,, ,,

४१. सूर साहित्य की भूमिका — डा. रामरत्न भटनागर, वाचस्पति पाठक

४२. सूर समीक्षा — डा. रामशंकर रसाल, १९५३

४३. सूर एक अध्ययन — डा. शिखरचंद जैन, १९३८

४४. सूर की भाषा — डा. प्रेमनारायण ठंडन, लखनऊ, १९५६

४५. सूर की वार्ता — अग्रवाल प्रेस, मथुरा

४६. सूर निर्णय — श्री प्रभुदयाल मीतल, द्वारका प्रसाद पारिख

४७. सूर साहित्य और सिद्धांत — श्री यज्ञदत्त शर्मा, आत्माराम अंड सन्स् दिल्ली

४८. सूर साहित्य नव मूल्यांकन — डा. चंद्रभान रावत्, जवहर पुस्तकालय, मथुरा

४९. सूर पूर्व ब्रजभाषा और उसका साहित्य — डा. शिवप्रसाद सिंह, हिन्दी प्रचार पुस्तकालय, काशी, १९५८

५०. सूरदास, श्रीकृष्ण बाल माधुरी — गीता प्रेस, गोरखपूर, सं २०१२

५१. सूर पंचरत्न — सं श्री लालाभगवानदीन, काशी, सं १९८४

५२. सूर विनयपत्रिका — गीता प्रेस, गोरखपूर, सं २०१२

५३. सूरसागर — नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सं २०१५

५४. सूरसारावली — सं डा. प्रेमनारायण ठंडन

५५. हिन्दी कृष्ण–भक्ति–काव्य पर पुराणों का प्रभाव — डा. शशिअग्रवाल, अकादमी, इलहाबाद

५६. हिन्दी और कन्नड में भक्ति-आंदोलन — डा. हिरण्मय, विनोद पुस्तक मंदिर आग्रा

५७. हिन्दी सुगुण साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका — डा. रामनरेश वर्मा, प्राक्कथन डा. कमलापति त्रिपाठी

५८. हिन्दी साहित्य	डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी, १९५६
५९. हिन्दी कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत	डा. उषा गुप्त, लखनऊ
६०. हिन्दी नाटक उद्भव और विकास	डा. दशरथ ओझा, दिल्ली
६१. हिन्दी साहित्य	डा. श्यामसुंदर दास, सं २००९
६२. हिन्दी साहित्य का इतिहास	पं. रामचंद्र शुक्ल, काशी, सं २००९
६३. हिन्दी साहित्य की भूमिका	डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी, १९५४
६४. हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास	नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
६५. हिन्दी और तेलुगु वैष्णव भक्ति-साहित्य	डा. के. रामनाथन, विनोद पुस्तक मंदिर, आग्रा

संस्कृत ग्रंथ सूची :

१. अग्नि पुराण	चौखंभा, वारणासी
२. अत्रि संहिता	अडयार प्रेस, मद्रास
३. अथर्वण वेद	चौखंभा, वारणासी
४. अहिबुध्न संहिता	अडयार प्रेस, मद्रास
५. ऐतरेय आरण्यक	चौखंभा, वारणासी
६. ऐतरेय ब्राह्मण	,,
७. ऋग्वेद	,,
८. कठोपनिषद	गीता प्रेस, गोरखपूर
९. काश्यय संहिता	अडयार प्रेस, मद्रास
१०. कृष्ण कर्णामृतम्	वाविल्ला प्रेस, मद्रास
११. कैय्यट भाष्यवृत्ति	निर्णय सागर प्रेस
१२. गीतगोविंद काव्यम	निर्णय सागर प्रेस, १९३७
१३. गीता भाष्य	गीता प्रेस, गोरखपूर
१४. छांदोग्य उपनिषद	,,
१५. तत्व दीप निबंध	सं नंदकिशोर भट्ट, निर्णय सागर प्रेस, बंबई
१६. तत्व मुक्ताकल्प	श्री वेदांत देशिक, देशिक ग्रंथमाला, मद्रास

१७. तैत्तरीय आरण्यक	वाविल्ला प्रेस, मद्रास
१८. तैत्तरीय संहिता	,,
१९. नारद पांचरात्र	अडयार प्रेस, मद्रास
२०. नारद पुराण	
२१. नारद भक्ति सूत्र	गीता प्रेस, गोरखपूर
२२. निरुक्त	चौखंभा, वारणासी
२३. न्याय परिशुद्धि	,,
२४. पाणिनि	निर्णय सागर प्रेस, बंबई
२५. पातंजलि महाभाष्य	,,
२६. पातंजलि योग (दर्शन)	गीता प्रेस, गोरखपूर
२७. बृहदारण्यक उपनिषद	अद्वैताश्रम, आलमोरा
२८. भगवद्‌गीता	गीता प्रेस, गोरखपूर
२९. महाभागवत पुराण	,,
३०. मत्स्यपुराण	
३१. महाभारत (दाक्षिणात्य प्रति)	निर्णय सागर प्रेस, बंबई
३२. यजुर्वेद	चौखंभा, वारणासी
३३. वायुपुराण	
३४. विष्णुपुराण	
३५. शतपथ ब्राह्मण	चौखंभा, विद्याभवन
३६. शंकर भाष्य	गीता प्रेस, गोरखपूर
३७. शांडिल्य भक्ति सूत्र	,,
३८. श्वेताश्वतर उपनिषद	,,
३९. सुबोधिनी	विद्याविभाग, श्रीनाथपुर
४०. षोडस ग्रंथ	भट्ट रामनाथ शर्मा (संपादक)
४१. हरि भक्ति रसामृत सिंधु	अच्युत ग्रंथमाला, काशी
४२. हारीत स्मृति	,,

तेलुगु ग्रंथों की सूची :

१. अन्नमाचार्य चरित्रं	सं श्री वेटूरि प्रभाकर शास्त्री, १९४९
२. अन्नमाचार्य संकीर्तनलु भाग १ से १९ तक	तिरुपति देवस्थानम् प्रकाशन
३. आंध्रकवि तरंगिणी-६	श्री चागंटि शेषय्या
४. आंध्रमहाभागवतमु	साहित्य अकादमी, हैदराबाद

ग्रंथ	प्रकाशक / लेखक
५. आंध्र विज्ञान सर्वस्वमु–३	तेलुगु भाषा समिति, मद्रास
६. आंध्रुल संक्षिप्त चरित्रमु	श्री येटुकूरि बलरामय्या
७. आमुक्तमाल्यदा	वाविल्ला प्रेस, मद्रास
८. आलवारुल मंगलाशासनमुल पासुरमुलु	श्री टी. के. वी. एन. सुदर्शनाचार्य
९. तिरुप्पावै सप्तपदुलु	सं श्री वेटूरि प्रभाकर शास्त्री
१०. तिरुवायिमोडि	श्री बच्चु पापय्याश्रेष्ठि, मद्रास
११. पंडिताराध्य चरित्र	सं डा. सी. वीरभद्र राव
१२. वेंकटेश शतकमु	वाविल्ला प्रेस, मद्रास
१३. संकीर्तन लक्षण	ताल्लपाकवारि लघु कृतुलु, देवस्थानम् प्रकाशन
१४ साहित्योपन्यासमुलु–३	साहित्य अकादमी, हैदराबाद
१५. शृंगार मंजरी	ताल्लपाकवारि लघु कृतुलु, देवस्थानम् प्रकाशन
१६. श्रीपादरेणु माहात्म्यमु	श्री रेवणूरि वेंकटाचार्य, देवस्थानम् प्रकाशन
१७. शकुंतला परिणयमु	,, ,,
१८. ताल्लपाकवारि कृतुलु (ताम्रपत्र)	तिरुपति देवस्थानम

अंग्रेजी ग्रंथों की सूची :

ग्रंथ	प्रकाशक / लेखक
१. आउट लाइन्स आफ हिन्दूइज्म	डा. टी. एम. पी. महदेवन, मद्रास
२. इन्ट्रोडक्शन टु वेदांत	डा. पी. नागराजा राव, भारतीय विद्याभवन
३. इन्फ्लूयन्स आफ इस्लाम आन इंडियन कल्चेर	डा. ताराचंद
४. एनसाइक्लोपीडिया आफ रिलिजिन अंड एथिक्स–२	
५. एपिग्राफिका इंडिका–भाग २०	
६. काल आफ दी वेदास	श्री ए.पी. बोस, भारतीय विद्याभवन बंबई
७. तिरुपति देवस्थान इन्स्क्रिप्शन्स्-५	देवस्थान प्रकाशन, तिरुपति
८. दी लाइफ आफ गौरांग	डा. एन. गंगूली
९. पाथवे टु गाड इन हिन्दी लिटरेचर	डा.आर.डी. रेनडे, भारतीय विद्याभवन

१०. मिनिस्ट्रल्स आफ गाड	श्री बांके बिहारी, भारतीय विद्याभवन
११. वैष्णविज्म, शैविज्म अंड मैनर रिलिजियस सिस्टम्स	डा. आर. जी. भंडारकर
१२. हिस्टरी आफ तिरुपति	श्री टी.के.टी. वीरराघवाचार्य, १९६३
१३. हिस्टरी आफ इंडियन पीपुल अंड कल्चर	

कन्नड ग्रंथों की सूची :

१. कन्नड गुरुराज चरित्र

पत्र—पत्रिकाएं :

१.	आंध्रपत्रिका वार्षिकांक, १९६४–६५	तेलुगु
२.	आंध्रप्रभा, साप्तहिक, ता. १८–५–६६	,,
३.	आंध्र साहित्य परिषद् पत्रिका	,,
४.	भारती, नवंबर १९५६	,,
५.	स्रवंति	,,
६.	आराधना	,,
७.	देवस्थान मुखपत्र	,,
८.	साहित्य संदेश, संत साहित्य विशेषांक	हिन्दी
९.	सरस्वती संवाद, सूर विशेषांक	,,
१०.	नागरी प्रचारिणी पत्रिका, २४–८–१९६३	,,
११.	परिषद् पत्रिका, १–८–१९६५	,,
१२.	माध्यम, वर्ष–२, अंक–२०, फरवरी, १९६६	,,
१३.	धर्मयुग, साप्तहिक, ५–५–१९६८ और ३०–४–६७	,,
१४.	सम्मेलन पत्रिका, भाग–४९, संख्या–२, शक–१८८५, भाग–५०, संख्या–२,३, शक–१८८६	,,

* * *

टी. टी. डी. प्रेस, तिरुपति.

T.T.D. Publications Series No:

Sale Price : Rs. 35/-

Printed & Published by Sri. Ajey Kallam, I.A.S., Executive Officer,
T. T. Devasthanams, Tirupati and Printed at
The Vidyarambham Press & Book Depot (P) Ltd,
Alleppey , Kerala., Ph: 0477 - 2262334 on behalf of T.T.Ds.